

- (१) श्रीयुत उदयपुर नगर के सेठ नन्दलालजी की तरफ से
लालाजी साहिब केसरीलालजी (उदयपुर)
- (२) ,, सेठ चंदनमली पीतलिया अहमदनगर
- (३) ,, जौहरी सेठ मुनीलालजी सकलैचा जयपुर
- (४) ,, वर्षभाणजी पीतलिया रतलाम
- (५) ,, सेठ पन्नालालजी कांकरिया नयानगर
- (६) ,, मास्टर पोपटलाल केवलचंद राजकोट
- (७) ,, प्रतापमलजी बांठिया पीकानेर
- (८) ,, फूलचंदजी कोठारी भोपाल
- (९) ,, नन्दलालजी भेड़वा उदयपुर
- (१०) ,, कुंवर गान्धिमलजी साहिब लोढ़ा अजमेर

पश्चात् भंडारी केसरीचंदजी साहिब (देवास) ने साहू
देशावरों के कितने ही अप्रेसरो के, जो अनिवार्य कारणों से न
पभार सके थे, उनके तार तथा पत्र पढ़ सुनाये, उन्हें यहां सविरत
न लियते सिर्फ नाममात्र प्रकट किये जाते हैं—

- (१) श्रीयुत अनरल सेक्रेटरी सेठ बालमुकुन्दजी साहिब
मूया, सतारा
- (२) ,, बाटीलालजी मोर्तलाल शाह मुंबई
- (३) ,, बागदार सुजानमलजी साहिब बांठिया प्रतापगढ़

भोयुत सठ वर्द्धभाणजी ने विवेचन करते श्रीमान् आचार्य महाराज साहिब तथा श्रीमान् युवाचार्य महाराज साहिब ने इतने परिश्रमपूर्वक यहां पधार कर रतलाम पावन किया तथा ऐसे महत्कार्य का लाभ भी रतलाम को ही दिया इसके लिये श्री संघ की ओर से उपकार जाहिर किया तथा श्रीमान् रतलाम नरेश तथा ऑफीसर वर्ग, जिन्होंने इस कार्य में पूर्ण सहानुभूति दिखाई है उनका उपकार प्रदर्शित किया तथा श्रीमान् पंचेड़ ठाकुर साहिब तथा पधारे हुए भाविक, भाविका तथा अन्य महाशयों का संघ तरफ से उपकार प्रदर्शित किया। इस महान् कार्य में यहां के स्वधर्मी सज्जनों ने तन, मन, धन से लाभ उठाने के वास्ते आये हुए साहिबों का आदर सत्कार, उतरने तथा भोजन कमेटी बनाकर वालंटियरों के समान जो अपूर्व सेवा बजाई है तथा रतलाम संघ को महान् यश प्राप्त कराया है उन्हें भी धन्यवाद दिया, पश्चान् जयजिनेन्द्र की दिव्य ध्वनि के साथ व्याख्यानसभा विसर्जित हुई। इस समय यहां के संघ तरफ से प्रभावना मांटी गई थी।

दोपहर के दो बजे भोयुत जालिमसिंहजी कोठारी इन्दौर राज्य के आवकारी कमिश्नर साहिब का व्याख्यान हुआ, जिसके असर से जैन महाविद्यालय खोलने वाबत कई उदार गृहस्थों की ओर से बड़ी २ रकमों के दान मिले, परन्तु वे स्कीम मंजूर होने बाद प्रकट किये जायेंगे। उस दिन नयेनगर निवासी सज्जनों ने आत्ममो-

जोधरा के चातुर्मास में सागर वाले सेठ चांदमलजी नाहर सहुदुम्भ पूज्य भी के दर्शनार्थ पधारे थे । उनकी पत्नी ने वहां अठाई की थी, इसके उपलक्ष्य में भादवासुदी ३ को उत्सव मनाया गया था, जिसमें ३० ग्राम के करीब २००० मनुष्य बाहर से आये थे ।

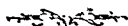
पंचेड़ के भीमान् ठाकुर साहिब चैतसिंहजी व्याख्यान का खोस लाभ लेने के वास्ते पांच वक्त यहां पधारे थे ।

इस चातुर्मास में पूज्य भी को अनेक उपसर्ग सहन करने पड़े, परन्तु आप स्वयं कभी नाहिम्मत या निराश न हुए, न कभी घबराये, परन्तु सत्यपथ पर कायम रहे । और घबरानेवाले भावकों को हिम्मत देते कि असत्य की मज्जक बहुत समय तक नहीं टिक सकती, सत्य ही की अंत में जय होती है । इसलिये सत्य को ग्रहण करो, सत्य को अंतुमोदन दो, फिर स्वयं सत्य प्रकाशित हो जायगा ।

इस समय कान्फ्रेंस आफिस दिली थी। समग्र भी संघ की आफिस और प्रकाश पत्र का खास कर्तव्य तो पड़ी हुई छोटी दराड़ जल्द ही मिटाना था । जो उन दिनों का प्रकाश पत्राव में न पैठता, समाधान करने बादत अपना सुप्रयास प्रचलित रखता और जल्दते में भी न होमता वो यह बात इतने से ही बंद हो

अध्याय ४८ वाँ ।

सवालाख रुपयों का दान ।



जावरा से मालवा मेवाड़ की ओर के बिहार में छोटीसादड़ी में सेठ नाथूलालजी गोदावत ने सवालाख रुपयों का दान प्रकट किया था । जिस रकम के ब्याज में अभी सांगोदावत जैन आश्रम छोटीसादड़ी में चलता है । एक तो रास्ते से दूर एक कोने में छोटासा प्रांगण, दूसरे आत्मभोगी कार्यकर्ताओं की झुट्टि, इन दोनों कारणों से इस आश्रम का लाभ चाहे जैसा हम नहीं ठठा सकते । जबतक स्वार्थत्यागी आत्मभोगी काम करनेवाले नहीं निकलगे वहां तक दान वगैरह का सदुपयोग नहीं होगा ।

इस बिहार में पुत्रराज भी शामिल थे । सब मुनिराज नये शहर पधारे और वहां कल्पेत् दिन ठहरे । दोनों मुनिराज सूर्य और चन्द्र की तरह जैनधर्म की प्रोत्ति का अपूर्व प्रकाश फैला रहे थे ।

पंजाब में से पौछे आये हुए जावरे वाले सेतों की प्रेरणा से आगरा, जयपुर और अजमेर के भावकों ने नयेशहर जाकर पूज्य भी

शिशिलाचार की पहेवड़ी में ढँकाते हुए साधु शरीर को तो मैं सिद्ध की चमड़ी में सज्ज हुआ सियाल ही समझता हूँ, विचारे दूसरे जानवरों की तो क्या ताकत परन्तु कुछ म प्रतिदिन्य दियाकर सिद्ध की ही बह फंसा देता है । ऐसे सियालों को हूँद निकालने में भी संध जितनी बेपरवाही, आलस्य और टालमटोल करेगा उतना ही समाज का किला पोला होता चला जायगा । किले का एक साध गुम्नज ढीला होजाय और जल्द ही उसे दुरुस्त कर दिया जाय तब तो ठीक नहीं तो वह गुम्नज ही दुश्मनों को राह दे देता है । ऐसे रोगों को निर्मूल करने की संजीवनी मात्रा एक ही है वह यह कि ऐसे सियालों से समाज को होशियार रखना और इस रोग के भेष का प्रसार फैलाते हुए रोकना ।

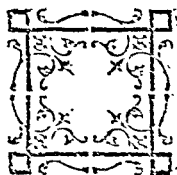
प्राचीन संस्कृत विभूति और गौरव के अमूल्य तत्वों से प्रकाशित श्री संध का यह अंग अपनी अस्वस्थता समझ गया है । स्वस्थ बनना चाहता है बठकर खड़े रहना मांगता है, परन्तु पक्षपात के घोंघाट प्रयत्नों की सफलता में विलम्ब करते हैं । अब आलस्य त्याग खड़े हो जाग्रत होने का जमाना है । सगर पर से बह कर आती हुई लहरें मेलने को तैयार होने का समय है । चारों ओर पर्यटन कर, बिहार को राह दे, पक्षपात को निर्मूल कर, आलस्य, असह्य और कुसम्प का निवारण करने के वास्ते काटिबद्ध

दया का धर्म जब ज्योत्सुक राजा ने स्थापित किया तब हिन्दू-स्थान की बनावट हो सकी । दयाधर्म जब राजकुमार पाल ने स्थापित किया तब गुजरात की आबादी हुई । दयाधर्म जब राखी विक्टोरिया के जमाने में प्रारंभ हुआ तब लोग संतोषी बनने लगे, परन्तु अपना धर्म आज शर्या, क्रूर और अधम बनता जाता है । पहिले अपने को इसका त्याग करना चाहिये, दया से शांति होती है किसी का कुछ गुन्दा हो तो उस पर दया करनी चाहिए, इनकी रक्षा करने लभी भ्रातृभावना का राज्य अपने में जरूर हो सकेगा ।

गुण, दान, निर्दोष और मूक प्राणियों पर जुलम करना या इन पर तेज घुरी चलाना निर्दयता है जिसका प्रास अपने को भी सहना पड़ता है इसलिए अपने को तब जगह दया का प्रचार करना चाहिए ।

राज से पूज्य भी होकिन पधारे, वहां वे एक सम्राट् तक टहरे थे । वहां श्रीजी के दर्शनार्थ निकटवर्ती प्रांनों के सैकड़ों आदर्य आते थे । करीब ४०० बहनों को जलनगर में जन्मपदान मिला । वहां से बिहार भर आया वही १ के राज पूज्य भी लांशिया पधारे, वहां के ठाकुर साहिब पूज्य भी के व्याख्यान में आये । उनके हृदय पर पूज्य भी के व्याख्यान का अत्यंत ही असर हुआ । ठाकुर साहिब ने बिहने ही नियम तथा प्रचारदान दिये और पाठ बहनों को जन्म-पदान दिया । दूसरे भी बहू से लोगों ने जन्मप्रचार की प्रविष्टारें कीं ।

मद्रास में हैं, पूज्य श्री की पूर्ण भक्तिभाव से सेवा की। पन्द्रह में
 पूज्य श्री पबोटे, कभी दिन संध्या समय पूज्य श्री बाहर जंगल में
 प्यारे थे तब एक स्त्री की लक्ष्मी दो पत्तों को ले जा रहे
 थे। मेरे गंगारामजी को यह स्वरूप मिलते ही उन्होंने दोनों पत्तों
 को सम्भरदान दिला दिया।



करमाकर चलका रहस्य सनमाना प्रारंभ किया । इतने में फिर
 चकर आये और दर्द का जोर बढ़ गया । तब दूसरे साधु गव्यू-
 तालजी को व्याख्यान देने की आज्ञा देकर आप अंदर पधारे और
 मुनि श्री मनोहरतालजी इत्यादि के समक्ष कहा कि “ मैंने अभी
 ज्ञानी वृद्ध पुरुषों के मुँह से ऐसा सुना है कि बैठे २ आंख की
 दृष्टि एकाएक बंद हो जाय तो मृत्यु समीप आ गई है ऐसा सम-
 मना चाहिये । इसलिये मुझे अब संभारा कराओ और मुनि श्री
 हरकचंदजी आज्ञायें तो मैं आलोचना करूँ ” ऐसा कह पूज्य श्री
 ने चतुरसिंहजी नानक एक साधु को आज्ञा दी की तुम अभी नये-
 नगर की ओर विहार करो । भायछों को यह खबर मिलते ही
 उन्होंने एक शस्त्र को रेल में नयेनगर की तरफ रवाना कर दिया ।
 वह साधुजी के पहिले शीघ्र पहुंच गया और मुनि श्री हरकचंदजी
 महाराज की सेवा में सब दहीकत निवेदन की । श्रीमान् हरकचं-
 दजी महाराज यह सुन आपाड़ सुदी १ के रोज दारह कोस का
 विहार कर नीमाज पधारे और वहां चिंतामस्त स्थिति में रात्रि
 निर्गमन की । दिन बढ़्य होते ही नीमाज से विहार कर आठ
 बजने के समय उतारण पहुंच गए । उनसे महाराज श्री ने कहा कि
 “ मेरी आत्मे तुम्हारी मुंहसि नहीं देख सकती । अब मुझे शीघ्र
 संभारा कराओ । जीव और काया भिन्न होने में अब विशेष विलम्ब
 नहीं है । ” मूलचंदजी महाराज ने कहा कि महाराज ! संभारा

से भाई चुन्नीलालजी ॐ कल्याणजी भी आये । मैं मोरबी था, वहां तार आया, परंतु बिना पंख के इतनी दूर कैसे पहुंच सकता था । चुन्नीलालजी ने महाराज भी से बंदबा कर सुखसावा पूछी, तब वे बोले कि “भाई ! मेरा अंतिम समय—संघारे का समय आ गया है दुःख दुःख दे रहे हैं । ” इस समय दूमेरे भी कई भावक और साधु पूज्य भी के पास बैठे थे । उस समय भीजी महाराज ने ‘ धोरा मुहुत्ता अबतं सरीरं ’ इत उत्तराध्ययन जी सूत्र का वाक्य कहकर सबको इतका मतलब समझाया ।

भिन्न २ भावक भिन्न २ औपधियां सुचाते थे, परंतु पूज्य भी ने फरमाया कि ‘ बाह्योपचार करने की अपेक्षा अब आंतरोपचार करने दो और आरंभ समारंभ निमित्त औपधियां न सुचाओ ’ ।

उस समय मुवराजजी हाजिर होते वो पूज्य भी को विशेष समाधानी रहती, परन्तु हिम्मत बहादुर, नशानदवीर अचानक भाई हुई मृत्यु से तनिक भी न डरे । शिष्य—समुदाय को शैष्या के पास

ॐ इन दोनों बाप बेटों ने अभी संयन अंगीकार कर आत्म-साधन जीवन सार्थक करना प्रारंभ किया है, उसकी माताजी और बहिन ने भी संयन लिया है, अन्य है ऐसे वैराग्य और त्याग को ।

भी न हो सका था । पूज्यभी बार २ करनाते थे कि 'मुक्त से नित्य-
नियम न हो उस दिन समझना कि मेरा अंतकाल समीप है इस
पर से वक्तों रिश्वों को बहुत धिंठा हुई और द्वितीया के दिन
उन्हें सागरी संथारा करा दिया तथा रात को महाराज भी को
जात्रजीवका संथारा करादिया गया, उसी रात के पिछले प्रहर म
कराय ५ बजे इस मिट्टी के कच्चे घड़े की नाई औदारिक देह को
स्वाग पूज्यभी का अमर आत्मा स्वर्ग सिंघाया । जैन शासन रूप
आकार में से एक जावत्वमान सूर्य अस्त होगया । चतुर्विध संघ का
महान् आधार स्तंभ टूटगया, उस समय साधुजी के १२ थाने
भीजीकी सेवा में वपरिचित थे ।

पूज्यभी के शरीर में रहा हुआ प्राण उनका ही नहीं परन्तु
सकल संघ का था । राजा महाराजाओं की भी न होसके ऐसी
उनकी चिह्नित्ता की गई । कई स्थान पर तपश्चर्या प्रारंभ हुई,
दान दिया गया, प्रतिज्ञायें ली गई और पूज्य भी की आराम होने
की प्रार्थनाएँ की गई, परन्तु उस आत्मा को परमात्मा के आभंगण
की वेगवाही न करना होने से असंख्य सावकों को शोकसागर में
मूर्च्छा में डाल समाज का सितारा अदृश्य होगया । संथारा इतना
थोड़ा न होता तो इस मृदुनहोत्व को दिवाने के लिये लोग
हमराते और लाखों रुपये खर्च कर देते ।

जब वे विराजते थे तब तो वे उनका लाभ न ले सके, और पीछे से रोना यह बिल्कुल पाखंड ही है ।

मुझे नेत्रों से तो उनके स्मितपूर्ण मुखचंद्र के दर्शन नहीं कर सकेंगे, विशालमालरसित मुखमल्ल में से गिरते हुए मधुर प्रोत्साहक अमृत के पान से पावित्र्य न हो सकेंगे, परन्तु हां, उनका मिशन यही उनकी आत्मा थी । अपन उन भी के सदाविचारों को ग्रहण करेंगे तो वे हर एक के हृदय-सिंहासन पर आरुढ़ हुए दृष्टि-गत होंगे ।

पूज्यभी के देह का नाश हुआ, परन्तु उन भी के प्राणरूप वन भी के आत्मारूप चारत्रघर्ष का ध्येय तो विशेष विस्तृत ही होगा । यह ध्येय खूब फैले, पूज्यभी की अमर आत्मा समाज के कोने-२ में प्रवेश करे और पूज्यभी का जीवनवत सब संतों में स्फुरित हो ।

तीसरे दिन बांकानेर, उदयपुर इत्यादि कई ग्रामों के श्रावक एकत्रित होगए और आचार्य भी का निर्वाणोत्सव बहुत ही धूमधाम से किया गया ।

चंदनादि लकड़ियों से चिता तैयार की गई । चिता में आग रखने का बहुतों की हिम्मत न हुई । अंत में पूज्य भी का मानुषादेह भस्मीभूत हो गया । श्रावकों ने मुनिराजों के पास आ आश्वासन दिया और

मोक्षित ढाह्याभाई के शब्दों में यह प्रसंग पूर्ण करते हैं, जिन्होंने हमारे लिये इतना कष्ट उठाया और हम उन्हें जीवित जी विशेष आराम न दे सके। उनके दुःख में उनके जीवित जी हमने कुछ भाग न लिया, जिनकी तप्त आत्मा को कुछ भी शान्ति न दे सके। उनके गुणगान करने की शक्ति भी हम बाहिर न दिखा सके.....किसी कुतूहनी ने तो उनकी व्यर्थ ही टोका की। इन महात्मा, इन संत, इन नरम हृदय के दयालु पुरुष का अपना भय करने वाले सुकृत्यों का त्याग कर दिज दुखाया यह सब याद आते हृदय फट जाता हैपरन्तु अहोभाग्य है कि आप महारथी की जगह एक दूसरे संत महात्मा ने स्वीकृत की हैं। और सम्प्रदाय के सेनापति का जोखिम भरा हुआ पद स्वीकार किया है, उन्हें यश मिले।

लगभग बत्तीस वर्ष तक चारित्र्य प्रवर्ज्या पाल और वसी बीच बाँध वर्ष तक आचार्यपद को सुशोभित कर अनेक भव्य जीवों को प्रतिबोध दे पूज्यश्री ने जीवन सार्थक किया; आपका जन्म, आपका शरीर, आपकी प्रवर्ज्या, आपका आचार्यपद यह सब अस्तित्व जनसमूह के कल्याण के लिये ही था, आपने अपनी नेमाय में एक भी शिष्य न करने की प्रतिज्ञा करती थी, परन्तु बहुसंख्यक मनुष्यों को दीक्षा दे उनकी उद्धार किया और कई सुनिवरो पर अवर्णनीय उपकार किया। आपका चारित्र्य अत्यंत ही

अध्याय ४१ श्लो १ ।

शोक-प्रदर्शक सभाएं.

[illegible]

הַיְּהוָה אֱלֹהֵינוּ וְהַיְּהוָה אֱלֹהֵיכֶם

[illegible]

...
...
...

तीन चार व्याख्याताओं ने सद्गत् पूज्यभी का जीवनचरित्र कह सुनाया । पूज्य महाराज भी के अकस्मात् वियोग से समस्त संघ को अत्यंत खेद हुआ और निम्न ठहराव पास किये गए थे ।

प्रस्ताव पहला ।

भीमान् परमगुणलंकृत, समाधान्, धैर्यवान्, तेजस्वी, जगद्ध-
लभ, महाप्रतापी, आचार्यपदधारक परम पूज्य महाराजाधि-
राज भी श्री १००८ श्रीलालजी महाराज का आषाढ़ शुक्ला ३
शनिवार को सु० जेठारण में अकस्मात् स्वर्गवास होगया, यह
अत्यन्त खेदजनक और हृदयभेदक खबर सुनकर इस रत-
लाम संघ को पूर्ण रंज व दुःख प्राप्त हुआ है । इन महात्मा
के वियोग से सारे हिन्दुस्थान में अपनी समाज के लोगों के
आतिरिक्त हजारों अन्य नतावलम्बियों को भी अत्यंत रंज हुआ है ।
सारी जैन-समाज ने एक अमूल्य रत्न खोया है और ऐसा फिर
प्राप्त होना दुर्लभ है । इसलिये यह संघ सभा पूरी रंजी के साथ
खेद जाहिर करती है । इसी मजमून का तार मुम्बई संघ का भी
यहां पर आया हुआ सभा में सुनाया गया । यह सभा मुम्बई संघ
का उपकार मानती है । और भीमान् वर्तमान पूज्य महाराज भी
श्री १००८ श्री जवाहिरलालजी महाराज साहिब को और संघ को
मुम्बई और रतलाम संघ की तरफ से आश्वासन देने के लिये भीकानेर
तार दिया जाने का ठहराव करती है व वर्तमान पूज्य महाराज भी —

वासियों की एक जाहिर सभा हुई थी । उस समय सभापति महो-
दय तथा अन्य वक्ताओं ने पूज्यश्री के राजकोट के चातुर्मास में
किये हुए अविश्वनीय उपकारों का अत्यन्त ही असरकारक भाषा
में विवेचन किया था और पूज्यश्री के स्वर्गवास ने शोक प्रकट
करने नीचे मुजिब ठहराव सर्वानुमत से पास किये गए थे:—

ठहराव १ ला.

राजकोट के निवासियों की यह सभा भी स्या० जैनाचार्य
पूज्य महाराज श्री १००८ श्री भीमलजी नक्षाराज के अपरुप
में स्वर्गवास हो जाने से अंतःकरणपूर्वक अत्यन्त खेद प्रकट
करती है ।

सं. १६६७ का चातुर्मास निष्कल जाने से संवत् १६६८ के
चातुर्मास में छासकर जानवरों के लिये बड़ा भारी दुष्काल
पड़ा, उस समय चातुर्मास में पूज्यश्री के वहां के निवास में पूज्य-
श्री ने वहां के तथा बाहर प्रांत के लोगों को दया और सेवा धर्म
का सच्चा अर्थ समझा कर लोगों में दया का बड़ा भारी जोश
पैदा किया था और पूज्यश्री के सद्बोध से राजकोट ने उस
दुष्काल में वहां से तथा बाहर देशावरों से बड़ा भारी फंड
एकत्रित कर मनुष्यजाति एवं जानवरों के प्रति बड़ा भारी
दमदा काम कर दिखाया था, ऐसे एक सच्चे महान् विद्वान् पवित्र

वासियों की एक जाहिर सभा हुई थी । उस समय सभापति महोदय तथा अन्य वक्ताओं ने पूज्यश्री के राजकोट के चातुर्मास में किये हुए अवरुणनीय उपकारों का अत्यन्त ही असरकारक भाषा में विवेचन किया था और पूज्यश्री के स्वर्गवास से शोक प्रकट करते नीचे मुजिब ठहराव सर्वानुमत से पास किये गए थे:—

ठहराव १ ला.

राजकोट के निवासियों की यह सभा श्री स्या० जैनाचार्य पूज्य महाराज भी १००८ श्री भोलालजी महाराज के अपरुपय में स्वर्गवास हो जाने से अंतःकरणपूर्वक अत्यन्त खेद प्रकट करती है ।

सं. १६६७ का चातुर्मास निष्कृत जाने से संवत् १६६८ के चातुर्मास में लासकर जानवरों के लिये बड़ा भारी दुष्काल पड़ा, उस समय चातुर्मास में पूज्यश्री के यहां के निवास में पूज्यश्री ने यहां के तथा बाहर ग्राम के लोगों को दया और सेवा धर्म का सच्चा अर्थ समझा कर लोगों में दया का बड़ा भारी जोश पैदा किया था और पूज्यश्री के सद्बोध से राजकोट ने उस दुष्काल में वहां से तथा बाहर देशावरों से बड़ा भारी फंड एकत्रित कर मनुष्यजाति एवं जानवरों के प्रति बड़ा भारी बमदा काम कर दिखाया था, ऐसे एक सच्चे महान् विद्वान् पवित्र

दिन जो जैन तथा जिवने हो अन्य शक्तों के अनुसार पाबुन-ह
की परवी का है तथा प्रवृत्ति-नियम धारण करने का एक पवित्र दिन
है, इस दिन महाराज भी के तरफ भातिभाव रखने वाले लोग अपना २
बाये-घंथा बंद रख दी सके हो जन्मादि कर धर्म-ध्यान में
विचारोंगे और इस तरह स्वर्ग-महाराज भी की तरफ अपना भाति-
भाव प्रदर्शित करेंगे। यह तद्वत् भी महारान सभापति साहिब की
मही से पत्रद्वारा वीरानेर तथा रत्नम संघ की तरफ भेजना
गिर हुआ।

जोधपुर।

दि० ३-७-२०

पूज्य महाराज भी के स्वर्गवास से संघ में बड़ा भारी शोक
रहा। पंडित भी पत्तलातजी महाराज ने इस दिन व्याख्यान बंद
रखने और भारी वदासी प्रकट की।

कलकत्ता।

द्वार द्वारा समाचार मिलते ही समस्त भावक भाइयों ने नार-
वाही चेन्नई की सन्मति के अनुसार बाजार का सब कामकाज बंद
रक्खा। हटखोता पट का बाजार भी बंद रहा। संवर पौष, तथा
दान पुत्र बहुत हुआ।

1. *Chrysomelidae*

समय है, व्याकरण, न्याय, तर्क के अभ्यास का शौक
 राजपूताने की ओर के भावकों एवं साधुओं की प्रकृति में न
 था। वहां सिर्फ निर्दोष चारित्र्य का शौक था। बुद्धि की सीताएं
 पारों की ओर पुजाने लगीं और इनमें से कितने ही साधु भी धीरे-२
 बुद्धि-वैभव की ओर झुकने लगे। पहले तो सब को यह अन्दा
 लगा। फिर चारित्र्य और बुद्धि में परस्पर युद्ध प्रारम्भ हुआ। यह
 युद्ध लम्बे समय तक टिकना चादिये। दोनों एक दूसरे की तरफ
 था २ कर अन्त में चारित्र्य बुद्धि में और बुद्धि चारित्र्य में लगी
 जायगी। अर्थात् बुद्धि और चारित्र्य में परे ऐसे "आध्यात्मिक भान"
 में दायित्व हो जायगे। हृदय और बुद्धि दोनों एक व्यक्ति के माहिक
 के समान ही भयंकर हैं परंतु व्यक्ति के साधन-दास के समान
 उपयोगी हैं। हृदय और विज्ञान हुयंगी हैं। परन्तु येगी कि जो
 हृदय और बुद्धि के साथ में होकर उस सीमा को पार कर गया है
 वह एक सुखी महात्मा है कि जिसके दोनों तरफ हृदय और
 बुद्धि साथ जोड़ एक ही आशा गावती रहती हैं। हम विदित तक
 पहुंचने के निम्न हृदय की रहस्यमय दलों और बुद्धि की रहस्यमय
 महल करती ही देखी।

जैनपथ-प्रदर्शक, आगरा ।

भीषण वज्रपात

जिस पै सब को दिमाग था हा ! न रहा ।

समान का एक चिराग था हा ! न रहा ॥

आज चारों ओर से इस जैन-धर्म पर आपत्ति की घनघटाये घिरी देखकर जिस जैन-धर्म के प्रेमी को दुःख न होना होगा । जिस जैन-धर्म के मुख्योद्देश "अहिंसा परमो धर्मः" के कारण एक दिन सारे नभोमंडल में बसकी गूती बोलती थी, सर्वत्र उसी का प्रचार था, आज वही धर्म—हा शोक है कि उसी के अनुयायी वनका अनुकरण न करके उसको अधोगति में पहुँचाने की कोशिश कर रहे हैं ।

धर्म को होतइहा से बचाने अर्थात् बिना बान्ध की मुरली में बूबने वाली नौका का ऊपर उठाने के लिये, बड़े पार करने के लिए ही साधु महान्यायों ने अहिंसा प्रवर्णन किया, किंतु श्रेय है कि "अहिंसा परमो धर्मः" का प्रचारक जैन धर्म आज अपने साधुओं से भी वंचित होता जा रहा है । हा ! जब हम जैन-धर्म के स्वप्न,

आचार्य प्रवर, विद्वान्मण्डली के रत्न, समा के भूषण, दया के सागर, शांति के वपासक, धर्मप्रेमी, निर्भीक, स्पष्टवादी, राष्ट्रिन्दिदा जैन-धर्म का प्रचार करने वाले परमपद प्राप्त पूज्य श्रीजालजी महाराज के आषाढ शुक्ल ३ शनिवार संवत् १९७७ जयन्तारण्य शहर राजपूताना में स्वर्गरोहण का समाचार सुनते हैं वद एलेजे के दुहरे २ हो जाते हैं ।

आषाढ सुदी ३ शनिवार जैन-धर्म के इतिहास में बाले अक्षरों में लिखा जायगा । जिस बात की कुछ भी सम्भावना न थी, वही साँसों के आगे पटित हो गई । जिस पोर आपत्ति की आशंका थी, वही हो उठता है वद अंत में इस दुःखिया जैन-समाज की आँखों के सामने आ ही गई । अनेक आशाओं पर पानी पेर कर लगान स्थानबदली ही नहीं लेकिन अनेकों जीवों को असाह्य शोकतगर में निमग्न कर उस दिन निन्दुर काल ने स्थानबदली जैन-वर्तिका में वज्रपात करके जिस प्रसूटित और दिग्गज तक योग्य विदेश करने वाले सुमन को हमदी गौरव-शालिनी लता की मोड़ में से हटा लिया । देखते २ दिना जिसके रिल में रहिले में इस बात का स्थान भी आपे हुए और दिना बिछी महान् वद के ५१ वर्षे तक औदारिक शरीर की भेदों में १६ वर्ष अचले हुए मय जीवन में महापुरुषों की लक्ष्मी

हि. जो उन्होंने जैन-धर्म की रक्षा, सेवा और अभिवृद्धि के लिये अपने प्यारे जीवन को तुल्य-वस्तु की तरह बर्तन करने में समर्थ किया। स्वदेश, जाति और समाज की वृद्धि एवं योगक्षेम के लिये जो भारी से-भारी विपत्ति भेड़ने और जीवन में सम्पूर्ण सुखों को अनायास ही बलिदान करने को तैयार हुए। मृत्युशय्या पर बेवसी में पड़े हुए भी अपने प्राणप्रिय धर्म की हित कामना के उच्च विचार जिनके मस्तिष्क में घूमते रहे जो दीन दुखियों के अकारण संघु भं, जिनके पतन पर एक ओर शोक की कालनिशा, दुःख की तरंगें तथा हृदय-विदारक हाहाकार ध्वनि और दूसरी तरफ समस्त नरनारी, युड़े दड़े और सब साधारण के मुंह से यशः-सौरभ का पटहनाद चारों ओर गूंज रहा है वनका देह और प्राण समदरुण गह्वर में चिरकाल के लिए छुप जाने पर भी वे चिन्मयी हैं उनकी मृत्यु किसी प्रकार भी हो नहीं सकती। यमराज का शानन दण्ड वहाँ विमल-कीर्ति की अभिराज्य-चक्रान्ते में टकराकर छुट्ट हो जाता है—डुब्ड़े २ होकर गिर जाता है। मनुष्य मृत्यु ने जहाँ पर गड़ेने पर भी उनकी पूजनीय आत्मा विचरण बराबर करता रहती है। मरने के बाद भी उनकी पवित्र और आदर्श जीवन उदाहरण बनने वालों के जीवन को पवित्र और उच्च करने का महान् उपकार करता रहता है।

आज शोककुल और निराधार समूह के मुंह से ऐसे वाक्य



एकसाँ समस्त समस्त जीवोंपर समभाव रख स्वकार्य में तत्पर रहते हैं और धर्मान्ध न बन जैन और जैनेतर प्रत्येक जीव कर्मोंसे हलके हों ऐसा सोचकर उपदेश देते और अपने चारित्र्य को समुन्वत रख लोगों और जगत् पर महान उपकार करने के सिवाय स्वआत्मा के कल्याण करने में भी सम्पूर्ण आराधक होते हैं ऐसे ही उपकारी गुण पूज्यभी में प्रधानता से थे। यही कारण है कि, पूज्यभी जैन और जैनेतर वर्ग में अति माननीय और पूजनीय होगये थे।

‘ना हसो, किसी जीव को मन, वचन और कर्म से दुःख मत दो, यह पूज्यभी का अतिप्रिय और मुख्य उपदेश था। किसी जीव को तनिक भी दुःख होता देख या सुन वे मन में बड़े दुःखी होते थे और कभी २ चन्हें उनका वह दुःख सहन भी न हो सकता था।

संवत् १६६७ के साल में पूज्यभी काठियावाड़ में विपरते थे। उस समय वर्षा न होने से संवत् १६६७ में भयंकर दुष्काल पड़ा; दया और दया की मूर्ति के समान आचार्य भीनेजब देखा कि, हजारों विचारे प्राणी सिर्फ घास के दिना मरण की शरण में बजा रहे हैं तब उन्हें अत्यन्त दुःख पैदा हुआ। परिणाम यह हुआ कि, दुष्काल पीड़ित दुखी जानवरों की रक्षा से संचित लाभ और पुण्यपर ऐसा सघोट उपदेश शास्त्राधार से दिया कि, इसके प्रभाव

जान जगत जाल इन्द्रजाल को सो खयाल,
 जाने बालापन ही से मद मोह को हटायो है ।
 छरीश्वर छुकन वंश भांहि अवलंश समो,
 जाओ जश-बाद मत छड़ुन में छायां है ॥
 दे दे उपदेश देश देशन में विशेष भांति,
 भयों के हृदय में सुबोध बीज बायो है ।
 स्वर्गीय जीश की सुबोध देन काज राज जाय,
 जय-तारण जगतारण स्वर्ग सिधायो है ॥ ३ ॥

(स्वर्गीय श्री श्री १००८ श्री पूज्य श्री श्रीलालजी महाराज का गुणगान)

श्लोक:-पंडित लक्ष्मीनारायण चतुर्वेदी रामपुरापाला.

श्रीलालजी महाराज पूज्य अवतारी ।
 हुए जैन जाति में सर्व समिद्धत-धारी ॥ एक ॥
 ये श्रीलालजी सेठ पिता के घर में ।
 थे हुए धर्मा उत्तम सु-लोक नगर में ॥
 जान लगा हुए साधु भोही लगर में ।
 पाएषो ' हुए एक ही, जो भाग्य घर में ॥
 घर २ सोहा है हानि, धर्म की मारी ।
 घर २ होत है जन्म, धर्मपद-धारी ॥

श्रीलालजी ॥ १ ॥

को पुष्ट करने वालों कई बातें, कविताएं और कहावतें चाहे जिस धर्म की हों उन्हे याद रख व्याख्यान में कहते और सब श्रोतृ-समुदाय को आनंदित करते थे ।

एक कवि श्री भाषा में कहें तो आर्हिंसा इनके जीवन का मुख्य मंत्र था और यह उनके जीवन में साने, बाने, की तरह फैल गया था, सत्य उनका मुद्रालेख था, तप उनका कवच था, ब्रह्मचर्य उनका सर्वस्व था, सहिष्णुता उनकी त्वचा थी, वत्साह जिनका ध्वज था, अमृत क्षमा-बल जिनके हृदय पात्र या कमंडल में भरा था, मुनातन योगी कुल का यह योग मालिक था, राग द्वेष के भंगनल से यह अलग था, गेरे तेरे के ममत्व-भाव से परे था, सब जीव का कल्याण का यह इच्छुक था, इतना ही नहीं, परन्तु सबके कल्याण के उपदेश में वह सदा मग्न रहता था ऐसा जैन भारत का एक वर्तमान महान् धर्म गुरु धर्माचार्य शासन का शृंगार, परोपकारी समर्थ वक्ता, समर्थ क्रियापात्र, बर्तमानिष्ठ गच्छाधिपति ५१ वर्ष की अपरिपक्व वय में बालधर्म बरा होने पर एक अनुभवंत अमूल्य आचर्य रोया है ।

राजकोट और काठियावाड़ में उन्होंने जगह २ जीव-दया की अथ पोषणा वचन सार से सचरकर रीति से की थी । अइस-टिपे दुष्टाल की अपेक्षा दुष्टरनिदा दुष्टाल अधिक विषम था, तभी दुष्टरनिदा में जीव-रक्षा का मो-रक्षा के लिए जो हुआ था वधसे

हमारे देशके रक्तक सन्धुच ये पशु हैं,
 हमारे देशकी दौलत सन्धुच ये पशु हैं,
 हमारा यल और बुद्धि सय फुल्लू ये पशु हैं,
 हमारी उत्तानि का सुदृढ़ पाया ये पशु है.

“All are murderers—the man who advise the killing of a creature, the man who kills, the man who plays, the man who purchases, the man who sells, the man who cooks (the flesh) the man who distributes and the man who eats.”
 —Manu

पशु भारत का धन है, पशु की विभूति है और अपने लघु बांधव है। धर्मशास्त्र, अर्थशास्त्र, और आरोग्यशास्त्र, की दृष्टि से पशुबध करना यह अत्यंत हानिकार और महा अनर्थकारी है। प्रत्येक धर्मप्रवर्तक ने पशुबध का—प्राणीनाश की हिंसा का निषेध किया है। अहिंसा, दया यह मनुष्य का प्राकृतिक धर्म है हिन्दुओं के पांच पाप, पाँचों के पाप महापाप हैं, जिनमें पांच महापाप इन सब में अहिंसा धर्म ही प्रधान पद पर ऊपर है।

पशून्तानि परिश्राणि नर्द्धेयां धर्म चाग्निनाम् ।
 आहिना मन्यमन्तेयं न्यायो मधुन वर्जनम् ॥

अ हिंसा, कत्त, अन्तेय, त्याग और मधुन वर्जन इन पापों के प्रत्येक धर्म बालों ने वर्जित माने है इसके सिवाय

करते कि इन कार्यों से देव देवी नष्ट होंगे या नष्ट होंगे ? उनकी
 ही गन्तव्यानुसार देवी जगज्जननी हैं समस्त जगत् की मूर्धन्य
 प्राणीमात्र की बह माता हैं इस हिनाय से मनुष्य मात्र उसके
 श्रेष्ठ पुत्र हैं और पशु उसके बनिष्ठ पुत्र हैं । माताओं का प्रेम
 हमेशा छोटे बच्चों पर अधिक रहता है यह स्वाभाविक है । माताओं
 रिश्ते के कारण उस के ही छोटे २ बच्चों के गले भर के समष्ट देव
 दाहना बह बिनना बेहूदा और मूर्खता पूर्ण बुरा बर्तन है । इसमें
 जो माताएं प्रगत होली हो तो वे माताएं ही नहीं हैं । देव देवियों
 को राजी करने के लिये बलिदान देना ही हो तो अपनी प्यारी से
 प्यारी पशु का देना चाहिये । स्वार्थी व्यासक श्रेष्ठ पशुओं
 का वियोग भजन नहीं कर सकते, इसलिए निरपराधी पशुओं पर
 दृष्टि दाखते हैं । देव-देवी तो बिल्कुल वाग्वान के भूये हैं । तुम्हारी
 हनवर बेधों भावनाएं हैं यह योजना तुम्हारी कमोटी की है जो
 तुम रखते हो वे तो हमें लेने ही नहीं, उनकी कर्तव्य से यह
 दाखल होगया ऐसा समझ इसे तुम बाधित लेने हो, जहां बुरा-
 कब, स्वार्थी पुत्रियों ने मुपय के मात में मांसाहार नाम करने की
 यह पुष्टि हुई निश्चयी और धर्म के नामवर होने भारत को लगना
 प्रारंभ किया ।

जलजल बाध न समझा जादू लक्ष्मण हो हो ग टोके जाने हैं, मात
 दाखल कदमों के दाख ही होय करनी भूय के होने हुए अनर्थ

ऐसी प्रार्थना कर छोड़ देना चाहिए कि हे जगद्गुरु ! आपसे दर्शन से पवित्र हुआ यह पक्षी भी निर्भय होकर बिचो अर्थान् कोई भी मांसाहारी उसका वध न करे, ऐसा संकल्प कर उभ पक्षों को छोड़ देना चाहिए जिससे पुण्य हो, मनुष्य में पूजा की यही विधि है यह पक्षी कई स्थानों पर प्रचलित है और पक्षों के पान में कहीं पहना कर उसे निर्भय 'अमरा' किया जाता है उपदेशकों ने धर्मोपदेश द्वारा और राजाओं ने राज्य सत्ता द्वारा इस दुर्घट विधि का प्रचार करना चाहिए ।

जगाना ज्यों २ आगे बढ़ता जाता है त्यों २ ऐसे घातकी रुन्देह भी कम होते जाते हैं । किन्तु ही दयालु और धर्मनिष्ठ राजाओं ने अपने राज्य में इसतरह होते हुए पशुवध को देशकी अवनति का और कालेरा सेग इत्यादि रोगों की उत्पत्ति का कारण समझ राज्य-सत्ता से उसे बंध कर दिया है यह अत्यंत संतोष की बात है ।

अभी ही महियर राज्य के नामदार नरेश ने जिस पुण्यमय प्रवृत्ति द्वारा प्रतिवर्ष हजारों जीवों का वध होता हुआ रोक कराने का प्रशंसनीय कार्य किया है उसे सुन दयालु मनुष्यों के हृदय आनंद से लहराये बिना नहीं रह सकते ।

महियर यह घुमेलखंड का एक देशी राज्य है । वहां अति प्राचीन समय से एक उच्च टेकरी पर शारदा देवी का स्थान है । इस ओर की

रहा । विचार ही विचार में समस्त रात बीत गई दूसरे दिन बदन-
वाण में मेरे एक मित्र सन्धुत भगवानदास नारायणजी बोरा सरफ से
एक पत्र मिला जिसका सारांश यह था कि:—

“महियर स्टेट में प्रतिघर्ष देवी को भोग देने के लिये हजारों
बहनों का बंध होता है । उसे बन्ध कमाने वाले प्रयत्न करना
आवश्यक है और रु० १५००० वहाँ हॉस्पिटल का भूतान बंधाने
वाले देवी को अर्पण किया जाय तो बंध जरूर ही बंध हो जाय ।”

इस पत्र ने मुझे कर्तव्य पथ सुझाया । सद्गुरु गुरुवर्य की अट्टरन
प्रेरणा का ही यह फल हो ऐसा मुझे दृढ़ विश्वास हो गया और
इस कार्य को पार लगाने वाले मैंने दृढ़ संकल्प लिया ।

महियर स्टेट के दिवान साहिब सन्धुत हरिलाल वर्क सारा-
भाइ गणेशजी अंजोरिया पी० ए० राजकोट के खानदान कुटुम्ब
के एक बदनगरा नागर गृहस्थ है । उनके साथ पत्र व्यवहार
प्रारम्भ किया । और रु० ११०००) के लिये मुम्बई स्थानकवासी
जैन संघ के अध्यक्ष बन्धु गौड़जी के रहिवासी रोड मेणजी भाई
मोभलभाई तथा उनके भाएज शांतिदास आसकरण जी० पी० से
बचन लिया । पञ्चान्न हम मुम्बई से (मैं और मेरे मित्र सन्धुत
बोरा) महियर गये । वहाँ दिवान साहिब की मुलाकात से हमें
आनन्द आनन्द हुआ और हमारा मनोरथ खपल होगा


नामदार महाराजा साहेब ने इस महान पुण्यकार्य से अपनी कीर्ति अमर करदी और कई भोले लोगों को घोर पाप के कार्यकी खाति में गिरने से बचाये तथा संख्याबन्ध मनुष्यों को नर्क के अधिकारी होने से रोक अपने लिये स्वर्ग के द्वार खोलदिये हैं विद्या और सत्ता का सदुपयोग कर अपना जीवन सार्थक किया है भारतवर्ष के अहिंसा धर्म के उपासकों के मन उनों ने इस शुभ प्रवृत्ति से जीत लिये हैं. हिन्द के प्रत्येक भागों में से हजारों सुवारक बाही के तार उन के पास जा गिरे हैं वहां के दिवान साहेब ने भी इस प्रवृत्ति के प्रेरक पत्र महान पुण्य प्राप्त किया है ।

सेठ नेपली भई तथा सेठ शांतिदास ने अपनी लक्ष्मी का लद्वय कर अलभ्य लाभ उठाया है. उनकी उदारता परम श्रेयका कारण भूत हुई पंद्रह कोटि रुपये खर्चने में भी जहां लाभ प्राप्त न हो सके वह लाभ उन्हें रु० १५००००) से प्राप्त होगया. सात हजार बकरों को सिर्फ एक ही समय अन्न दान देनेने रु० २५०००० खर्च होते हैं उस के बदले रु० १५००००) में हमेशा के लिये प्रतिबन्ध होते हजारों पशुओं का पध नंद होगया यह जान दुर्लभ वन नहीं है फिर इन १५०००० रुपयां से दवाखाने का महान बांधाजायगा जिस से हजारों दुःखी दरी की अजीब बी-
 रतपर बरसती रहेगी द्रव्य का शुभ से शुभ उपयोग करने की इच्छा है

सुजरानी अनुवाद ।

शार्दूल विकीर्णित ।

कोटी म्होर सुवर्ण स्वर्च करवां, जे कार्य थातुं नथी ।
 जेनी वर्ष अयुत कष्ट भन धी, किंचित् सिद्धि नथी ॥
 सेनाओ अगणि युद्ध कर शे, तोये न आशा फल ।
 तेबुं महान् सुकर्म साध्य तुलम, साधु कृपा किंचित् ॥१॥
 जुबो महियर राज्य मां बलिविधि, श्री शारदा मातने ।
 थातो तो वध रे बहु पशुवलो, ते रोकव्यो सज्जने ॥
 विभुवन सुत दुर्लभे भनकरी, ते पाप रंकाविधुं ।
 बैनाचार्य भीलालजी स्मरणमां तेसंत नामे धयुं ॥ २ ॥

 इससे सम्बन्ध रखने वाले चित्र आगे दिये गये हैं ।

लालजी मेहता उदयपुर, भीयुत सागरमलजी गिरधारीलालजी बंगलोर,
 भीयुत शम्भूमलजी गंगारामजी बंगलोर, भीयुत भीचंदजी अक्बराणी
 व्यावर, भीयुत घोल्लालजी चौरङ्गिया व्यावर, भीयुत अ रचंदजी,
 घेवरचंदजी अजमेर, भीयुत मेतलालजी कांसवा अजमेर, भीयुत
 फानमलजी गाढ़मलजी चौरङ्गिया अजमेर, भीयुत मिमीलालजी
 छाजेड़ जयपुर, भीयुत रतनचन्दजी दफतरी जयपुर, भीयुत गुना-
 नमलजी दहा जयपुर, जौहरी कल्याणमलजी छाजेड़ जयपुर,
 भीयुत शेपमलजी बालिया पाली इत्यादि २ ।

व्यस्थित गृहस्थों तथा बीकानेर और भीनासर संप की एक
 सभा सा० २-२-२० से सा० ४-२-२० तक भीयुत भेरुदानजी
 गुलेच्छा के मकान में एकत्रित हुई । प्रमुख स्थान भीयुत दुर्लभजी
 त्रिभुवनदास जोहरी को दिया गया । प्रारंभ में आये हुए देसावरों
 से सदानुभूति दर्शक वार, पत्र प्रमुख महाराज ने पढ़ सुनाये ।
 पश्चात् १००० भी भीलालजी महाराज के अकरनात् वियोग से
 समाज की जो हानि पहुंची है उसके लिये हार्दिक खेद प्रकट किया
 गया ।

व्यस्थित सभासदों ने ऐसा विचार डठाया कि भीनान स्वतन्त्र-
 वादी पुत्र महाराज के स्वदेशों की स्मृति सर के भावा भक्तानों ने
 आरोपित करने के लिये एक ऐसी संस्था कायम की जाय कि,

(५) रु० ५०००) या ज्यादा और रु० ११०००) से कम देने वाले व्यक्ति इस संस्था के शुभेच्छुक (Sympathiser) गिने जायेंगे और उनमें से भी मंत्री आदि पदाधिकारी चुने जा सकेंगे ।

(६) रु० २०००) या अधिक प्रदान करने वाले गृहस्थ इस संस्था के सभासद गिने जायेंगे और उनका चुनाव प्रबन्ध कारिणी सभा में हो सकेगा ।

(७) चंदा प्रदान करने वाले गृहस्थों के नाम शिलालेखों में गुरुकुल आसन के दरवाने पर नय चंदे की वादाद के प्रकट किये जायेंगे ।

(८) प्रबंध कारिणी सभा अपनी इच्छानुसार पांच अन्य विद्वान गृहस्थों को सलाह देने के लिये शरीक कर सकेगी और उनके मत गणना में आसकेंगे और उनपर चंदे का कोई प्रतिबंध न होगा ।

नोट—इस गुरुकुल का उद्देश्य समाज की भावी संतान को धर्म परायण, नीतिमान, विनयवान, शीतवान, व विद्वान बनाने का होगा ।

प्रस्ताव २ रा.

भी बीकानेर संघने प्रकट किया कि यदि बीकानेर में सहरके

इन महापुरुष का चरित्र किया है वे ही उनके चरित्र की महिमा कुछ भरा नें जान सके हैं। साधुओं नें ज्ञान योड़ा हो या अधिक हो इसकी बिदा नहीं, परन्तु चरित्र विशुद्धि तो अवश्य होती ही चाहिये, ज्ञानका फलही चरित्र है "ज्ञानस्य फलं विरतिः"। जिस ज्ञान से विरति अथवा चरित्र प्राप्त न हो वह ज्ञान अक्षत समझना चाहिये। सच्चरित्र यही समस्त विश्व को बरा करने वाला अद्भुत बरीकारक मंत्र है। जन समूह पर विद्या, तर्क, या अधिकार की अपेक्षा चरित्र का प्रभाव विशेष और चिरस्थायी पड़ता है, चरित्र बल से ही महात्मा गांधीजी जनों विरुद्ध बंदनोप हैं, पूज्य श्री भार भार उपदेश देते कि नर से नारायण होते हैं इसलिए चरित्र रत्न का दल जीव के रट होने पर भी करना चाहिये।

साधु पुरुषों का चरित्र रही सदा धन है। इस धन द्वारा स्वर्गीय सुख के अखंड खजाने खरीदे जा सकते हैं वस्तुकी पूर्णता से पूर्ण-प्रभुता की प्राप्ति हो सकती है।

मीनान् पूज्यमी को अविमान्त परिष्कृत के कारण प्राप्त हुए सर्वज्ञ प्रसीत शास्त्र के अपूर्व ज्ञान के सुकरूप उद्धार, अनुकरणीय और अविचार रहित चरित्र की प्राप्ति हुई थी। श्री वीर प्रभु की आज्ञा यही उनका मुद्रा लेख था और यही उनका पवित्र धर्म था। इन आज्ञा के पालन में वे

हुंहुन्दकम्" इस भावना का प्रादुर्भाव करने के परिणाम में लीन होता था । Give the ears to all but tongue to the fire. इस न्याय से पूज्यजी सब सुनते परन्तु विचारकर बहुत कम बोलते थे । उत्तरत से व्यादा न बोलते और जो कुछ बोलते वह जिनागम के अनुकूल ही बोलते थे । पूज्यजी का व्याख्यान अनुपम था । त्रिविध तापों से तन शोकाकुल निराश आत्माओं को यह प्रतापी महात्मा नवीन वस्त्र देते इनकी मधुरवाणी भवत करके ही ज्ञानन्दसागर बल्लरता । सुपुन हृदय की अन्वकारनीय गुहा में जीवनज्योति का प्रकाश फैलता, मोहमय की आत्मा जागृत हो कर्तव्यक्षेत्र में प्रविष्ट होती । इनका अद्भुत वीरत्व इनके प्रत्येक वाक्य में व्यक्त होता था । उनकी मुखावर्षिणी वाली से विश्व पर अवर्णनीय उपकार होता था । वे कर्तव्य पथ से भ्रान्त पादिकों को सन्मार्ग दर्शक सद्बिषय भूक्त थे । तिन वाले रूपधर्म से भरपूर अति मधुर जीवनरस सुन कर कायरों की कायरता दूर करते उन्नति का मार्ग बटोले, बिहारी और स हिंसकता के पाठ पढ़ाते थे । कर्तव्य पालन में प्राण की भी परवाह न करना यह उनके उपदेश का सार था । उनके लिये ज्ञान, भजन, मन्त्रन था । वे भिद्यन्मय और स्वस्वरूप स्थित थे । इनका देह-प्रेम दूरे गया था । इसलिये वे अप्रतिषेध सम्पूर्ण समस्त, अरिभित्त स मध्यवान, और विमुक्त परित्रवान बन गए थे । वे सब वैराग्य के करार समधि प्राप्त हमेशा उनके समीप बैठ रहते ।

उन बहुत संयोजन करते थे । दुराग्रह से किसी विचार को पकड़े न करते तथा शास्त्र का नियम स्वीकृत हो वहां वे मुक्त भी नहीं, परन्तु गवाह करते थे । समाज में ऐसा कोई दूसरा जोरिम थे वे हमेशा जाग्रत रहते थे ।

शिष्यों के साथ के व्यवहार में सुमुख के बौद्ध गान्धर्व होने वाला हृदय उनके अन्यायी व्यवहार के समतल बन थे भी कठिन बन जाता था । गुरु के साथ का यह तेल था । मनभेद के कारण सम्बोधन न होने पर भी वे दूसरों के सदगुणों की खेदकारी न बताते थे, परन्तु अवसर मिलने पर उनके गुणों की प्रशंसा करते थे । उन्होंने अपना समस्त जीवन भी शास्त्र देश के शास्त्र में ही समर्पित दिया था । उनके वय के प्रमाण में दूसरा कोई व्यक्ति भाव में ही मिले, ऐसा कदुबं संभार्य पुरुष भी मे प्रकट होना था । सत्य ज्ञान की प्रवर्धन करने वाली थी । वे सूत्र के शास्त्र की पूर्णतः प्रवर्धित विचारों के लिये शिष्य समूह को उत्साहित करते थे । ऐसे विचारों के प्रवर्धन के कारण में वे शास्त्र के अन्तर्गत रहने और समाज की प्रवर्धन करने में सफल रहे थे ।

एवं के शास्त्र शास्त्र, अतः देश पर सुख के लिये समाज की हो रही है, अतः के अन्तर्गत समाज के लिये हो रही है।

ठाक है कि लाचारी के साथ अपना पदिना हुआ भेष उतारकर फेंकदे, परन्तु भेष को न लजावें, दंभ से दुनिया को न ठगें. चोर चोरी करे इसमें नवीनता नहीं है परन्तु चोरी पदरे वाले, रक्षण करने वाले ही भक्षण करने लगजाँय वह असह्य होजाता है ।

कर्तव्य पालन की टेवें निर्भयता का पोषण करता है. पूज्यश्री का जीवन विविध घटनाओं से पूर्ण है वे कभी दुःख से दबे नहीं, दिह्मूढ़ बने नहीं, उदासीनता से दुबले हुए नहीं, आत्मा की भूख पिटाते, प्यास छिपाने में उन्हेंने आविभान्त भ्रम किया है. पाप पुंज के अग्नि समान और अन्याय के शत्रु समान वे हमेशा मूर्जारित् कर रहे, कभी भी कोमलता नहीं त्यागी. श्रीकृष्ण को एक ब्राह्मण ने लात मारी उसे असंकार की तरह धारण करली, गांधारी ने घोर भाप दिया, जिसे श्रीकृष्ण ने अधिक सम्मान दिया, साधु सरिता की ओट होजाने पर भी श्रीजी ऐसे ही अविचलित, संभार आर मदासागर बने रहें ।

“ आचार सिंधु महा शोधक मोती नोंतु !
 दोरी बिना उदाधि ने तलीये ज्वानुं !
 त्यां मच्छ सिंधु महि, व्हाण गली जनारा !
 तोफान गिरि मूल तेय उखेड़नारा !
 ते राक्षसोनी उपर प्रीति राखवानी !
 ते राक्षसोनी सहसा अच देव अंश !

23

24

निंदा टूटवाजी इत्यादि कई केरावर्धक प्रवृत्तियों की । परन्तु पूज्यभी ने अनुपम समा और शांति धारण कर निंदकों को प्रशंसक बना लिये थे, उनके साथ पूज्यभी का प्रेममय वर्तन “ द्वेष का नारा द्वेष से नहीं परन्तु प्रेम से ही होता है ” इस आत्मवाक्य की चरितार्थ करता था । पूज्यभी का प्रेममय व्यवहार जाबरे वाले मुनिराजों के निम्नांकित काव्यों से स्पष्ट समझा सायगा ।

राग आसावरी ।

पूज्यजी के चरनों में धोक हमारी, जाऊं क्रोड़ २ बलीहारी

पूज्यजी के चरनों में धोक हमारी ।

टोक नगर में रेनो थो मुनि कौ, मात पिता परिवारी ।

गुरु मुख वपदेश सुनीने, लीनो संजम भारी ॥ पूज० ॥ १ ॥

आत्म वस कर इंद्री जीती, विषय विकार बिडारी ।

वैराग्य माहे जली रया हो, धन २ हो ब्रह्मचारी ॥ पूज० ॥ २ ॥

होकन मुनि की संप्रदाय में, प्रगट भये दिनकारी ।

आचारज गुण करने दीपो, महिमा फैली चंडेदिशकारी ॥ पू० ३ ॥

नाम आपको भीलालजी, गुण आपका है भारी ।

चारों संग है मिल पदवी दीनी रत्नपुरी पूजारी ॥ पूज० ॥ ४ ॥

बीजचंद्र ज्युं कला बढ़त है, पूरण हो उपकारी ।

निरखत नैना वम न होवे, सरत मोहनगारी ॥ पूज० ॥ ५ ॥

चौथे पाठ हुआ चौथमलजी महा गुणवंता,
 हुआ पंडितों में परमाणु आचार्य दीपंता ।
 कई जगत् को दियो ज्ञान ध्यान और साजे ॥ हु ॥ ४ ॥

अब पंचम पाठ आप हुआ बड़ भागी,
 श्रीलालजी महा गुणवंत छती के त्यागी,
 कियो धर्म अधिक उद्योत मिथ्यात्वी लाजे ॥ हु ॥ ५ ॥

ये मुनी माल रसाल ध्यान नित धरना,
 हीरालाल कहे इत धर्म उन्नति करना ।
 जीवांगज कियो चौमासो मोघ के काजे ॥ हु ॥ ६ ॥

अथ स्तवन ।

पूज्यजी सीतल चंद्र समान, देखलो गुणरत्नो की खान ॥ टेर
 जिन मारग में दीपतासरे, तीजे पद महाराज ।

कली कालमें प्रगट भये हो, दया धर्म की जहाज ॥ पु ॥ १ ॥
 पूरे इण्य में आप पूज्यजी पूरा पुण्य कमाया ।

धन्य है माता आपकी, सरे ऐसा नदन जाया ॥ पु ॥ २ ॥

मीठी बायी सुणी आपकी, खुशी हुए नर नार-

फागल सुद पूनम के ऊपर कियो घरों उपकार ॥ पु ॥ ३ ॥

छः साठ और आठ उपवास के भी उन्होंने कई श्लोक किये हैं साठ २ आठ २ उपवास के दिन भी पूज्य भी स्वयं ही व्याख्यान करताते थे ।

तेरह उपवास का भी एक श्लोक पूज्य भी ने किया था ।

वैयाघृत्यः—स्वयं आचार्य होने पर और शिष्य समुदाय भी अति विनीत होने पर भी आप स्वयं आहार पानी लाते और शिष्यों के लिये भी खा देते थे । इतना ही नहीं परन्तु पात्र, ग्लोली, पत्ते, इत्यादि खाने या पानी छानने इत्यादि के कार्य में भी वे शिष्यों की पूरी मदद करते थे । उनके विनयवन्त शिष्य ये काम न करने के लिये पूज्य भी से बार २ निवेदन करते परन्तु वे अपने स्वभाव के कारण प्रमाद न कर कोई न कोई धर्म कार्य में वैयाघृत्य में लगे रहते थे ।

अन्यनिद्रा और स्वाध्यायः—पूज्य भी रात को १० या १२ और कभी २ एक बजे तक निद्राधीन न होते थे और एक दो या तीन बजे जागृत हो जाते थे । एक प्रहर से अधिक निद्रा वे कबित ही लेते थे । नित्य प्रति रात को दो से तीन बजे तक निद्रा से जागृत हो सूत्र की स्वाध्याय करते थे । बहुत से सूत्र, उन्होंने कंठस्थ कर लिये थे । उसमें से दशवैकालिक सूत्र का पाठ तो वे सबसे पहिले कर लेते थे । फिर उत्तराध्ययन के कितने

देवैर्युतापि हि यथा शुक्तसङ्गतस्य

सत्त्वागते वनशिखपिण्डनि चन्दनस्य ॥ ३४ ॥

हे पूज्य ! देवताओं से भरी हुई भी इन्द्र की संभा आपके धार-
रने से खूब सुशोभित हुई होगी—कारण कि, शुकादि पक्षिओं से युक्त
चन्दन वृक्ष की शोभा मोर के आने तथा अनेक वृक्षों से युक्त नन्दन
वन की शोभा कल्पवृक्ष के होने से ही होती है (यह कवि की
रस्रंक्षा है) ॥ ३४ ॥

वीर ! स्वदीपदयया मिलितः सुपूज्यः

कालेन संहृत इतो न जनोऽस्त्यनीशः ।

तस्यानुकम्पनतयाऽऽप्तनुपूज्यवर्या

दृश्यन्त एव मनुजाः सहसा मुनीन्द्र ! ॥ ३५ ॥

हे वीर प्रभो ! आपकी कृपा से प्राप्त हुए पूज्य भीजी को वो
काल चटाकर स्वर्ग में ले गया किन्तु इस से (यह) जन नायक
हीन नहीं हो सका कारण कि, वह पूज्यभी एक ऐसे पूज्य प्राति-
निधि को स्वस्थानाप्त कर गये हैं कि, जिनके कृपाकटाक्ष से ही
संस्तुत प्राणी दण्डनमुक्त हो रहे हैं ॥ ३५ ॥

श्रीलालपूज्य ! महिमा तव किं निगाधो

ध्वनिभान्तसञ्चितकलोस्त्रिविधाधिलीनाः ।

सांसारिक जीव ध्यान के प्रभाव को तब समझते हैं कि, ध्यान-
मौल्य योगी ध्येय के अनुभूत (जिसका ध्यान किया जाय इष्टीक
अनुसार) सभी प्रकार को प्राप्त करते हैं, इसीसे ही अपने अनरक्त
(मदा नीरोगिता) को चाहने वाले रोगियों के लिये जलभी समु-
त्पन्न हो जाता है ॥ ६६ ॥

यो मातृपूर्वमयदा बहु नो हितार्थं
स त्वं स्मृतोऽपि शुभदो भव भव्यमूर्ते ! ।
तिष्ठन्मृतोऽपि गरुडोऽहिरदत्तवानां
किं नाम नो विषविकारमपाशरोति ॥ ७० ॥

मान ही मातृ पहिले ध्यान करनेक प्रकार के विशेषदेश दिया
जाये, तबः तब समस्त किये गये भी ध्यान शुभदायी हो कारत सि,
तो गरुड सर्व के बाटे हुए या दिव प्रचर होकर उठाना है तो क्या
हर समस्त करने से विष विकार को दूर नहीं कर सकता ? ॥ ७० ॥

निन्दो निन्दन इति प्रथम त्वनिन्दन्
तत्पदार्थान्तरालविधिना दिग्वत्प्रभाताः ।
निन्दन्ति तस्मिन्निमान्मगतं भुवन्ति
त्वामेव दीव्यन्मन एतदादिनोऽपि ॥ ७१ ॥

ये नृप प्रतिपदा प्रथम ध्यानको निन्दा किया करने के हैं
नर कान्त कलकल रूप के प्रभाव से प्रभावित हुए हैं कान्त

(४३)

बाले और स्वर्ण के नगीने सरीखे स्थान वर्ण-पूज्यधीजी को अपने
नेत्रों के सामने उपस्थित ही देखता हूं ॥ ६१ ॥

कारुण्यनीरधरमुत्तममात्मविज्ञं
चारिज्यभूमिगुणसस्यविशेषशेकम् ।
हृषन्ति सर्वसुजनाः शरणं विलोक्य
सिंहासनस्यभिह मय्यशिखण्डिनस्त्वाम् ॥ ६२ ॥

करुणारूप जल से भरे हुए तथा चरित्र रत्ना भूमि में गुणरूपी
धान्य को उचित रीतिसे साँचने वाले ऐसे आत्म ज्ञानी, इनमें
रत्नक तथा सिंहासन पर बैठे आपको निहार कर समस्त सज्जन रत्नी
नयूर हर्षित होते हैं ॥ ६२ ॥

ज्ञानाप्तिमेव्य शुभकर्म वनुव्रितं च
पातुण्डलुण्डनपरं हृदवाजिशूरम् ।
अर्हद्गिरं भुवि भवन्नतान्द्रियार्था
मालोकयन्ति रमन्ते नदन्मुखाः ॥ ६३ ॥

यदि बुद्ध में ज्ञान तत्त्वादि को पकड़ कर शुभकर्मों का व्यव-
साहित कर पातुण्डल मत खंडन शूर, अतिन्द्रिय अर्थ युक्त-अर्हद्
वादी को वारंवारकों में बोलते हुए आपको सभी प्रसन्न हो केकर

हे सुतिगद्यामृत्य ! आपके चरणों की सेवा मनुष्यों के
 जितना सुख देती थी उतना सुख मरिच, सुवर्ण और चांदी से
 बना हुआ राजभवन भी नहीं देता है, इस प्रकार कविलोक कहते
 हैं । १०६ ॥

वैलोक्यपूत ! ममिर्ता समये तु नमिन्
 स्वतुल्यकान्तिमुत्तमां न कदाऽऽप कोऽपि ।
 अघाऽपिकोऽपि गङ्गाय ! यथा त्वमेव
 सातवरेण भगवन्नभितो विमानि ॥ ११० ॥

हे भगवन् ! विशेषावन-सार्धनाथ ! वस त्रिदुर्ग से उस
 समय में जो शोभा आपने प्राप्त की थी उसे कोई भी जीव प्राप्त न
 कर सके तथा वैसे ही हे गङ्गाय ! आप जैसे आपही शोभते
 कर्णान् आप आप ही हैं, आपही समस्त विश्व आपके दूसरे
 नहीं हो सकती ॥ ११० ॥

देवेन्द्रमन्त्रिविमवाचितपादपीठ !
 संस्पृश्य पादयुगलं तत्र पूर्यपूताः ।
 पूज्यस्य संधितद्विबो बहुशोभमाना
 दिव्यमृजो जिन ! नमन्निदशाधिपानाम् ॥ १११ ॥

हे देवेन्द्र की भक्ति से पूजित चरणों वाले-मुमुक्षु ! मन्त्री ॥

$\frac{1}{2} \times \frac{1}{2} = \frac{1}{4}$

[illegible][illegible]

[Musical notation]

संस्कृत-संज्ञा-संग्रहः १२३

ਸਦਾਕਾਮੀ ! ਸਿਰਫ਼ ਇਹ ਹੀ ਨਹੀਂ !

མཁའ་འགྲུབ་ཀྱི་མཁའ་འགྲུབ་ཀྱི་མཁའ་འགྲུབ་ ༡༢༣

[illegible]

सुखं भवति: सुखं भवति: सुखं भवति: सुखं

संन्यासिभ्यः सुखादिभ्यः ।

इति श्रीमद्भगवद्गीतायाः अष्टादशोऽध्यायः समाप्तः ॥

सुधासिद्धिद्वयं कथं न संशयः ॥ १०४ ॥

पट्टानों से विपम तथा दम्भ से वृद्धि प्राप्त ऐसे दुस्तर भवसागर
में डूबते हुए हम लोगों की रक्षा करो ॥ १३६ ॥

विश्राणने विमलवैश्रवणेन तुल्यो
धर्मादितत्त्वनिचयस्य वदान्यकस्त्वम् ।
शाणायमानधिपणः सकले प्रतीतो
मन्ये न मे श्रवणगोचरतां गतोऽसि ॥ १४० ॥

दान में कुबेर सदृश, धर्मादि तत्त्व प्रदान में शाण मनान
वृद्धि वाले तथा जगत्प्रसिद्ध भी आपको मैं नहीं जान सका (यही
मेरी वज्रमयी अक्षता का नमूना है) ॥ १४० ॥

संग्रामवह्निभुजगार्णवतिग्मशत्रो
न्मत्तेभभिहकिटिकोटिविपाक्तवाणाः ।
दुष्टाग्निंकटगदाः प्रलयं प्रयान्ति
आकर्णिते तु तव गोत्रपवित्रमन्त्रे ॥ १४१ ॥

बुद्ध, अग्नि विरुगल संपे, दुस्तर समुद्र, नान्ये गदा इत्यादि
पापी, भयंकर मिट, बहुर मृच्छर, विपाकित वाण, दुष्टपादा गदा,
मृच्छ और वे ग ये सब उड़ी दण्ड में नष्टपाय हो जायेंगे । मैं न
जब आपका नाम करी पवित्र मन्त्र सुनूँगे ॥ १४१ ॥

चिन्ताविगानजननान्नादिनागृहीता
कल्पदुर्गे न्वयि नृमिद्रिममनन्त्ये ।

धारक, गुल ध्यान तथा संयमादि से युक्त ऐसे किसी महापुरुष के पावित्र्य चरणों को जन्मान्तर में आत्मसात् करके ही अभीष्टप्रद, समर्थ एवं जगत्सृजित आपके चरणकमलों को प्राप्त किया है ऐसी हमारी प्रयत्न धारणा है ॥ १४४ ॥

श्रीमत्सु तत्सु न हि दुःखमवाप चास्मान्
यात्रेषु खं प्रतिनिधीन् समयज्ञसुज्ञान् ।
जवाहीरलालशमिनः प्रददत्सुं नाणु
स्त्वेनेह जन्मनि मुनीश ! परामवानाम् ॥ १४५ ॥

हे मुनीराज ! आपके रहते हुए हमें दुःख का अनुभव नहीं हुआ तथा आपके स्वर्ग सिंघासन पर अवश्य देश, काल, क्षेत्र एवं भाव के जानकार प्रयत्न पेटिडित भी १००८ श्री जवाहीरलालजी महाराज को आप अपने स्थानापन्न कर गये हैं, इससे वर्तमानभव में तो हम पराभूत नहीं हो सकते ॥ १४५ ॥

काव्यप्रणीतिज्ञनिवानवकीर्तिर्द्वया
आहूतिर्नामनिर्गद्य भवद्विभूतेः ।
ग्रामोऽपवादपदभागभित्तिरिकाया
जातो निकेतनमहं मथिताशयानाम् ॥ १४६ ॥

काव्य ज्ञान से पैदा हुई नवीन कीर्तिरूपी द्वीप के दुर्लभ पर सम्पन्न होकर पूजनपर श्रीजी के विभूतिरूप कविहरिदा

किया हुआ है जिससे सब ध्यान से आपका साफल्यकार होमाया
करेगा ॥ १४८ ॥

युष्मत्पदानुगमने भविनां मनीषा
उत्कन्ठयन्ति रमयन्ति सदादिशन्ति ।
कृत्वाऽखिलं परिकरं गमनोत्सुकश्च
मर्माविधो विधुरयन्ति हि मामनर्थाः ॥ १४९ ॥

आपका अनुसरण करने की इच्छा भव्य जीवों को उत्कण्ठित
करती है, प्रसन्न करती है एवं सब प्रकार से आज्ञा देती है इसीसे
मैंने भी आपका अनुसरण करने की सब तरह की चेष्टारियाँ करली
हैं परन्तु गर्वभेदी अनर्थ (पाप) ही मुझे बारम्बार रोऊँ रहा
है ॥ १४९ ॥

स्युस्त्वाद्विधा बहुविधा विबुधाः सुशान्ता
स्त्वां वीक्ष्य मानवशिरोऽर्चितपादपीठम् ! ।
आहेयभोगानि भोगभुजा निरस्ताः
प्राद्यत्प्रबन्धगतयः कथमन्यथैते ॥ १५० ॥

अनेकों विद्वानों ने आपको समस्त जनमस्तरों से पूजित चरण
पीठ देखा, ये सब आपके समान शान्तात्मा बनना चाहते
थे किन्तु बन न सके वे सांसारिक भोगों को भोग कर सर्प के
समान मूर्खित हो चुके थे, जिससे उन्हें पछाड़ खानी पड़ी

दैवेन मे हि विमुखेन भवन्तमद्य
 हत्वा हतं मम हृदो वद किं न त्वयः ।
 किं चाऽधिकेन मम शर्मविभिन्नमर्म
 जातोऽस्मि तेन जनयान्धव ! दुःखपात्रम् ॥ १५३ ॥

हमारे प्रतिकूलवर्ती दैवने आपको हरकर हमारा क्या नहीं
 हर लिया यह आपही कहें, अधिक क्या कहें, हमारा शर्म-कल्याण
 (शुभ) भिन्नमर्म हो चुका है जिससे हे प्राणिमात्र के बन्धो !
 घाज हम दुःख के भाजन बन बैठे हैं ॥ १५३ ॥

सम्प्रत्यसाम्प्रतवहुच्छलद्रम्भयुक्त
 स्तद्धीनसाधुपथवर्त्तिनमाक्षिपन्ति ।
 रक्ष प्रभो ! बहुदुरक्षरवर्षतोऽस्मात्
 त्वं नाथ ! दुःखिजनवत्सल ! हे शरण्य ! ॥ १५४ ॥

हे प्रभो ! इस समय कपट पट्टु अनेकों दंभी लोग निष्कपटी
 साधुमार्गों जैन समाज की हंसी उड़ाते हैं अतः हे नाथ ! हे दीन
 बन्धो ! हे भक्तवत्स ! हे शरणागतप्रतिपालक ! उन दुष्टाक्षरों
 के बरसाने वालों से रक्षा करो ॥ १५४ ॥

नाथ ! त्वदीयचरणे विनयेन युक्ता
 मत्प्रार्थनेयमधुना सफलं च कार्या ।

स्यादम्भदादिद्वयं शुभभावनिम्नं

यस्मान्क्रियाप्रतिफलानि न भावजन्याः ॥ १५५ ॥

हे नाथ ! आपके चरणों में हमारा यह सखित्य प्रार्थना
अब युक्त है-उचित है । यह हम अब सकल कर और हमारे
अन्तःकरणों को शुभ भावा में लायें-सम्पूर्ण बनाये काय
कि, भावशून्य (अद्धाविर्दान) कियाए । जहाँ नदी के ज्वरे होते
हैं ॥ १५५ ॥

स्वस्मिन्निवाशु बहु परम शाश्वतवगर

कारुण्यशाम्बनिर्वहमेम मानमानि ।

मन्मानमाऽग्रमदमाशु विवर्तयेत !

कारुण्यपुण्यवमने ! वशिना वरगय ॥ १५६ ॥

हे ईश ! हे संयमियो मे अग्र ! हे कृपा करने वाले ! हे
भवन ! अपनी आत्मा के समान हमारा मन को अपने
बनाओ अर्थात् हमारे हृदयों में भावपूर्ण । हे शम्भु
समूह को फूट कर भर दो और हमारे मन को
उसे उलट दो अर्थात् हम (नाथ)
को अथवा मद की वसति से । हे ईश ! हे कृपा करने वाले
कर दो ॥ १५६ ॥

तन्तु प्रपूर्णमगतो वचना विनाऽपि
स्यात्केवलेन मननाऽपि ममेष्टमिद्विः ।

भारो न ते यदि मचेतदपीह सार्धो

भङ्ग्या नते मयि नहेऽ ! दयां विधाय ॥ १५७ ॥

“ तुम सब पूर्ण मनोरथ होवो ” यदि आप ऐसा कहने का कष्ट न भी उठाकर केवल हमारे अभ्युदय को आप मनमें ही विचार दिया करें दोनों हमारी अभिलाषित शिद्धि हो सकती है, भक्ति से नष्ट हमारे जैसे भक्तों में दया करना आपका कर्तव्य है कोई शोभा नहीं मानतो यदि शोभा भी है तो निष्प्रयोजन नहीं सप्रयोजन है ॥ १५७ ॥

चेत्तिष्ठते जनमनः कलित्वेदवथ

श्रीमद्वियोगप्रभवात्परिभावतश्च ।

हित्वाऽधुना सुखनिदानसमाधिमाशु

दुःखाद्दुःखोदितनवत्सर्गतां विधेहि ॥ १५८ ॥

विकराल कलिकाल जन्म दुःख से तथा श्री चरणों के वियोग से आविर्भूत परिभव द्वारा इस समय सनत अनुजों के अन्तःकरण पूर्ण दुःखमय हो रहे हैं अतः आत्मा का सुख साधन करने वाली समाधी छोड़कर हमारे दुःखाद्दुःखों के दलन में कटिबद्ध हो जाए ॥ १५८ ॥

झोर झोर कापों में व्यस होने से तथा दुर्दैव से बाधित होने
से मैं शून्य हूँ। आपने पदारविन्दों का दर्शन न कर सका अथवा
प्राप्त न करने पाया, अतः हे जगन्नाथ ! मैं अवश्य ही क्षमा
प्राप्त ॥ १६१ ॥

त्वत्पादचिन्तनपरं प्रविहाय सर्वं
नन्नस्मिन्नो यदि भवोऽहं मानवादीम् ।
नन्नप्रत्यपि प्रतिपत्तं भवता न गुणो
वन्ध्योऽस्मि तदभुवनपावन ! हा हतोऽस्मि ॥ १६२ ॥

सर्वस्व का बलिदान कर मात्र आपने ही शरणगत या परन्तु
आपने भी मुझे निराधार छोड़ बिना कुछ दूँ दे परलोक विचार
गये अब इस समय में यदि रक्षा न करोगे तो इस अनाथ का
सर्वनाश अवश्यंभावी है ॥ १६२ ॥

सर्वे भवन्तु सुखिनो गददैन्यमुक्ताः
सक्ताः परोपकृतिकार्यचये भवन्तु ।
जह्युः परस्परविरोधमवाप्य मोदं
देवेन्द्रवन्य ! विदिताऽस्तित्वन्मम ! ॥ १६३ ॥

हे देवेन्द्रवन्य ! हे सक्त पदार्थतन्वह ! आपने बहुत कुछ
से आधिन्य धि एवं शोक से मुक्त होकर प्रसन्न हो मुझे हे मम
परोपकार में लगे और प्रसन्न रहकर परस्पर विरोध को छोड़ें
॥ १६३ ॥

आप हमारे सन नवीन पूज्य श्री की रक्षा करें जो अन्धकार से पीड़ितों के लिये प्रचण्ड मार्तण्ड हैं, पिपासा कुलों के लिये शीतल जल हैं, विपथरों से काटे हुएों के लिये गरुड़ हैं एवं जिन्होंने भय प्रद व्यसनरूपी जल से भरे हुए इस अपार संसारसागर से रक्षा की, करते हैं और करेंगे ॥ १६६ ॥

शत्रुः प्रशाम्यति पराङ्मुखतां प्रयाति
 सिंहाहिदन्तिमहिदारचयाश्च हिंसाः ।
 ध्यानं नितान्तसुखदं हृदये नराणां
 यद्यस्ति नाथ ! भवदङ्घ्रिसरोरुहाणाम् ॥ १६७ ॥

हे नाथ ! यदि आपके चरणकमलों का ध्यान मनुष्यों के हृदय में है तो निस्सन्देह शत्रु स्वयं नष्ट होंगे अथवा भगवान्‌ने छिह्, सर्प, हाथी आदि हिंसक जीव भी पराभव पा सकेंगे ॥ १६७ ॥

यक्तुं बृहस्पतिरसक्त इतोऽपि दीनः
 शक्नोति नां बहुविशारदशारादपि ।
 अस्मादृशोऽल्पविषयस्तव किं गदामि
 भक्तेः फलं किमपि मन्तव्यमश्विनायाः ॥ १६८ ॥

एकान्त संचित की हुई जिस भक्ति के फल को समर्थ बृहस्पति भी नहीं कह सकता बहुत जानने वाली सरस्वती भी कहने को—

श्री

नकल रोवकार महकमें खास व इजलास मुन्शी मुजानम
शांठिया कामदार कुशलगट ता. २१—६—६ ईस्वी

सिका

B. SUJANMUL

Kamdar of Kushalgarh

धुंके मौसम बारिश खतम होने आया और जंगलमें घासभी
पका होकर सुखने आगया है भूल लोक अपनी कम कदमी से इलाके
हाजा के जंगल में आग याने (दवाइ) ये अहली बाती से लगादेने
हैं जिस से की तनाम घास व सब किसम की लकड़ी जलजाती है
जो उन्ही गरीब लोगों के गुजारे की बड़ी आधारकी चीज है और
ऐसा होने से राजाको भी नुकसान होता है अबल भी इस अगर
में माकुल इन्तजाम रखनेलिये हुकम जारी हुवा है तगर इतमिनाम
लायक इन्तजाम हुवा नहीं लिहाजा कवल अत्र गुजर जाने ऐसे
बाक के इस साल इन्तजाम होना मुनाभिद लिहाजा

हुकम हुवा के

एक एक नकल रोवकार हाजा महकने मालमे भेजकर लिख
जावे के इस वक्त जनाबन्दी का काम शरू है और हर रेश्द के
भलि वारते रुकवाने के जनाबन्दी महकन मात से आव है
इस वामने हर मुखिया गांव से इन बातही काशी समजायनकर
मुचलके वाधानी को पत्रा का लिता जावे के वो अपने अपने—

मारी सोन में दूरा व परेह कोई मारे नहीं ना न्याय वा तनर पीछे
वे भी कोई मारे नहीं ।

६० प्यारबंद मातु का श्री रावता हुकूमतुं
तिला सं० १८६५ जेठ बुदी ३

श्रीरामजी ।

साधव

ठिकाना साठोला में ई मुजब नही देगा । रावतजी साहब
भी इतनतसिंदजी साददी का पंच करव करवा आया जों पर छोड़ा ।

लाजाव में मजली नहीं मारानां गजा पगु लतावठेर सीतर
आगे परतएमें कोई नहीं मारेगा और खास रावते आ जानवरों
के सिवाय हिरण गोज नहीं मारेगा और वर तिलना मुजब पर
गला में कोई मारेगा वो समादी जावेगी सं० १८६५ जेठ बुद १०
२० नरसिंही राजा हुलुरा हुकूमतुं भावर कावीक वैशाख तीन
महीना में जानवर मात्र नहीं मारेगा सदावरे सबे नरसिंही राजी
इलुर रा बेलसुं ।

नकल रोवकार मइकमे खात व इनलास मुंशी सुजानमल
पांठीया कामदार हुशतगढ़ ता० २१-६-६ ई०

महोर छाप

B SUJANMAL
KAMPAE OF KESHUNGAH.

पर पुरा अस्तर इस बात का कर दिया जावे के वो पाड़े के नारंगे के रियाज को व खुशी छोड़कर वममें अपने पायदे का एतकाद कर लेवे वनकल सारी पुत्तीस सुररीन्डेन्डेन्ट की तरफ भेजकर तदरीर हो के इस बात के निगरार होके ऐमा पाकान गुजरे क्योंकि यह एक सबाब का काम है इस में इसमें हर सुल्तानजीम ने वादीली कोशीश करने में इसी साल इस बात का नतीजा जहुर में आयेगा कि इस हुकम की तामील व पायबंदी रीवाया इलाके हाजा के जानीब से वा इतमीनान हुई तो निहायत दर्जे खुशी का वायस होगा और एक एक नकल इसका वशनाय तामील मसनदरे मोहकम पुराव छोटी सरवा को भेजी जाकर बजी नहीं पाईले में रहे । फक्त

सिफा

ल० कामदार कुशलगद

हजुरी चेनाजी साकिन अनादली ई मुजब सोगन कर्वा मारा हाथ तुं जनावर पिलकुल मारं नहीं और घरे राकं नहीं गाने पारभुजारा सोगन है ।

द० जालमसिह चेनाजी का कदवातुं

ठाकरां रुगनाथसिहजी वगैली साकिन अनादली जामोरदार को भाई हरार हुलो, तीतर मारं नहीं राकं नदी गाने पारभुजारा सोगन है ।

द० जालमसिह रुगनाथसिहजी का कदवातुं

करार बगैरे से भी होना पड़ा गया तो साबित है जानवर दौड़ा है मुजद खं १८६५ का जेठ बड़ी दुंगवार ।

भी रावली तरफ से

बेशाख कार्तिक में कसाई अमावस ग्यारस बकरा राज नहीं करेगा आगे भी बंदोबस्त हो परन्तु अब भी पुस्तु राखा जावेगा बारा ही मदिनारी अमावस ग्यारस भी माफ है कार्तिक बेशाख से मदिना माफ और माराही मदिना की अग्यारस माफ है साज में चैत्र मास में राज गन देवगन बारे है कसाई दुकान नहीं करेगा हिरण झीतरा रोज ग्यारस अमावास तुंदा में शिकार नहीं करेगा ।

६० पन्नालाल रांका भी हजुर का दुकान से

भीतरमेश्वरजी
सिक्की छे

सुबहन को ठाकरा राज भी १०५ भी मोर्जेहिजी हासाबर्द
जैतरा साधु पूजजी महाराज भी भी १००८ की भी भीलालजी
महाराज मोठा ववन पुरपारी पयार्यों बांदे दुधो तरे में बादलने
गया तरे हला मुजद सोदन किया है तो जावजीव राजा जवमुं
१—शिकार में हार को नार खबर दुजे कोई ज नर नरा
हाथमुं नहीं नारमुं

(૨૫)

કરવાના ઠગવ ઠા. ૨ સપ્ટેમ્બર ૧૯૨૦ ના ગોજ રાજ્ય તરફથી પ્રસિદ્ધ થયો છે. અને તે માટે જ્યે તે નાનદારનો માનપૂર્વક આભાર માની શી. દીવાન મહેદ્દનો અમલ સદી મળવાલા સંદરદુ ઠેરાવેલા પોસ્ટાલ કોનો નકલો જમે જાહેર પ્રજાની આગ માટે પ્રસિદ્ધ કરીને છાંપ, કે જે જેથી ભવિષ્યમાં તે રાજ્યમાં તેવો બનાવ. કંદિ દેવયોગે બનવા પામે તો જોનારા આ વખાણેજોની માફી અને આચાર દ્વારા જાહેર પ્રજાને અટકાવી શકે.

વચન ટેમસ
સેન્ટરલ રોડ
મુંબઈ નં. ૪.

મેયર્સ થોમસ.
શાંતિદાસ આશકરણ.

અરુણક અનુવાદ

(૧)

ગિમ્પર હીંગલાલ ગણેશજી અંજાગિયા સાહેબ; વી. ઇ.
દીવાન ગિપાનત મહેદ્દ વાર્તા - ૨-૬-૧૯૨૦
મુંબઈ ૧૯૨૦

(મર્ચી હીંગલાલજી અંજાગિયા

મહેદ્દર ગણેશજી ગણેશજી પાત્ર કરીને વચન વચા બંધિ પ્ર-
સિદ્ધિમાં બહોળા કાવચમાં જાય છે. આ મર્ચી અંજાગિયા મર્ચી હોય
તો મુક્તિ કરવામાં આવે છે કે નહીં તેની શરદાજી. મહેદ્દર ગણેશજી

परिशिष्ट ३

पूज्य श्री का. मुत्तलमीन मक्त सैयद असदअली M. A.
A. S. F. T. S. जोधपुर।

सैयद असदअली लिखते हैं कि, जब की १००८ की
पूज्य सीतालजी महाराज का बीमारा जोधपुर में हुआ था, मुन्हीं
श्रीपूज्य महाराज के उपदेश से ईश्वरदानी (आत्मज्ञान) बहुत
पहुँचा। मुन्हीं श्रीपूज्य महाराज ने अल्पमत्त कृपा करके नौकार
मंत्र की कृपा करी और खुद श्रीपूज्य महाराज ने अपनी जुवान
फैजवर जुवान (खास भीख) से जुवानी नौकार मंत्र पाद कराया
तो अबतक अपना हू और बड़ा काम देता है—जैनधर्म का उपदेश
लेने के बाद वन्हीं दिनों में मृत लोगों से बड़ा कष्ट उठाना पड़ा, यहाँ
तक कि मृत लोगों ने मुझे जल में नरवा डालने के उपाय किये थे।
और दो दिन जगह दुष्ट लोगों ने मेरे बदन पर चोट भी पहुँचा
यी, इस वजह से कि मेरे भाई कमरिहसन जिसे मुइराब (देवा-
हरियाला) में हाक्टर थे। सो मैंने अपने भाई हाक्टर मजहूर में
कहकर तमान जिले में करीब ३००० तीन हजार के लीजों को
दवा होने से बचाया। जब कि मेरा इन मरक फैला हुआ था और
मेरे भाई हाक्टर मजहूर को हर तरह के अखिपरान इतिहास थे।
इन काररवाई से रियासत जोधपुर में इस दवा के काम के बचन

मार २ कर बर्गिंग करते थे. जो कि, वहां पर उस रईस ने मुक्तको खात उनकी मुशकिल के वक्त बुलाया था। मैंने वहां पहुंचते ही उन रईस साहब से अर्ज करादी कि, मैं अब वापिस जोधपुर जाता हूं। आपका मुक्तसे जो खास काम है वह धरा रहेगा, लेकिन उन रईस नादिव का मुक्तसे खास तौर से मतलब और गारंज थी उन्होंने जल्दी से मुत्ताकात की और मुक्तमे पूछा कि, थिगर मुत्ताकात किये वापिस क्यों जाते थे। मैंने कहा कि, मैं सुनता हूं कि, आप हजार हजार कागलों का रोज मरीह फक्त मेनराजी के शकल में शिकार करते हैं। इससे आपकी बड़ी बदनामी हो रही है और लोग गालियां देते हैं और फक्त आपकी दिललगी के लिये हजारों जानों का मुक्त में नाश होता है। इस तरह उनको कई तरह समझाया तो रईस ने आपन्दा के वास्ते ऐसी हिंसा करने की सौगन्द लेली। इसी तरह एक रईस साहब जो जोधपुर में बड़े सुअग्निज हैं।

उनको उनकी इस किस्म की नामवरी जाहिर कराने का बहुत शौक हुआ तो उन्होंने बच्चे वाली कुतिया जंगल बगीरह से तलाश कराकर मंगाना शुरू किया और उनके शरीर पर चिपड़े लिपटा, लिपटा कर लैम्प के बेल के पीपों में उन कुतियों को डलवा देते तब तर फरवाते पीछे दिया सलाई बतला देने जब वह बच्चे वाली कुतिया जलती फूटती उड़लती वह रईस साहिब मय जनाना के बहुत हंसते चुश देते और इनाम वकसीम फरमाते इसी तरह सैफड़ों ज्ञाने कुतियों

चार गधों की चनरईस साहिब ने ले डाली, जब मुझको मालूम हुआ मैं खुद चन रईस साहिब की खिदमत में गया और अपनी जान तक देना मंजूर किया और हर तरह समझा कर उनसे आइन्दा के वास्ते सोगन करा दी। लेकिन इस मौके पर यह ज़ादिर कर देने काबिल है कि, चन रईस साहिब को इस पाप के अशुभ फल हाथों हाथ मिल गये। जिसको मारवाड़ के छोटे बड़े जानते हैं। मुमलमानों में एक महात्मा मौलाना रूम हुए हैं। उन्होंने भी इन की बाणों में लिखा है कि:-

तो मशौले खौफ अर हन्म खुदा।
देरगिरो सख्त गिरो मर-तरा ॥

जनाबेमन हमारे कल्लेजे कांपते हैं। हमारा दिल दुखता है, हमारी कलम में ज़रा ताकत नहीं कि, हम एक शिम्मा बराबर भी ओसाफ हमारे परम दयालु, परम कृपालु, सत्य धर्म की नाव, शान के समुद्र, दया धर्मकी होली गार्डिड, श्री श्री १००८ श्री श्री पूज्य मो मोलालजी महाराज का क्या लिख सकें, आपने हजारों पापियों को सत्य मार्ग और हज़ारों हिंसाकारों को "अहिंसा परमो धर्मः" पर आमिल बना दिया था। सेकड़ों चोरोंने चोरी अर हिंसा के छोड़ दिए थे। मीने बाबरियों तक ने तीर कमठे फेंक दिये थे और तनी बाड़ी पर गुजरान करने लगे थे।

Indeed, I will never find such a prop-kari Gura on this world. like shri pajiya Shrikaji Maharaj again. His fatherly love & sympathy bring me into force, to weep for him once a day at least.

My Jiwan is useless now without his 'superium' saving. what I can write you, Sir, more than this !



एवम् व्यवहारका समस्त भार आपड़ा आपने वीर बुद्धि से सबको यथोचित संभाला परंतु सांसारिक कई अनुभवों ने आपको वैराग्य में तल्लीन बनादिया आप संसार को असार समझ वैराग्यवंत हो दीक्षित होनेको तैयार हुए, परंतु आपके बड़े बाप (पिताके बड़ेभाई) ने आपको आज्ञा न दी। अतएव आप स्वयं भिक्षा लेकर गुजर करने लगे, वर्ष सवा वर्ष यों व्यतीत होने पर आपने सबकी आज्ञा ले महाराज श्री घासीलालजी महाराज श्री मगनलालजी के पास भातुआ के समीप लीमड़ी ग्राम में सं० १८४८ में मगसर सुदी १ को दीक्षा अंगीकार की, परंतु दीक्षित होने के १॥ माह बाद ही आपके गुरुजी का परलोकवास हो गया इतने अल्प समय में गुरुजी ने आपको अत्यंत शिक्षित बना दिया था उस गुरुतर मोह के कारण आपका मन उचट गया और आप पागल से होगए, पौने पांच माह पागलावस्था में रहे। दरम्यान तपस्वीजी श्री मोतीलालजी महाराज ने आपकी खूब सेवा सुश्रूषा की। आपके उस समय के पागलपनेके घावोंके निशान अभी तक मौजूद हैं। आपको भले चंगे किये और सब चातुर्मास प्रायः अपने साथ ही कराये, इसी कृतज्ञता के कारण पूज्य जवाहिरलालजी महाराज तपस्वीजी की आज तक सेवा कर रहे हैं और इस उपकार के स्मरणार्थ आप के पूर्ण अहसानमंद हैं। दीक्षा लिये पश्चात् आज तक आपके निम्नोक्त ३१ चातुर्मास हुए हैं।

अन्य धर्मों का अवलोकन किया है। आप संस्कृत के पारंगत विद्वान् होकर हिन्दी, गुजराती, मराठी आदि भाषाएं बोल सकते हैं। श्रीमान् लोकमान्य तिलक आपसे अहमदनगर में मिले थे। आपने जैन धर्म के सम्बन्ध में अपनी गीता में कई सुधार करना चाहे थे और लोकमान्य ने मंजूर भी किये थे। जैनधर्म के सम्बन्ध में जगन् प्रसिद्ध लोकमान्य तिलक महाराज के सुवर्णांकित शब्द ये हैं—

“जैन और वैदिक ये दोनों प्राचीन धर्म हैं। परन्तु अहिंसाधर्म का प्रणेता जैनधर्म ही है। जैनधर्म ने अपनी प्रगल्भता के कारण वैदिक धर्म पर कभी न मिटने वाली ऐसी उत्तम छाप बिठाई है।”

वैदिक धर्म में अहिंसा को जो स्थान प्राप्त हुआ है वह जैन धर्म के कारण ही है। अहिंसा धर्म के पूर्ण वारिस जैन ही हैं। अढ़ाई हजार वर्ष पूर्व वेद विभागीय यज्ञों में हजारों पशुओं का बध होता था। परन्तु चौबीसवीं वर्ष पहिले जैनियों के परम तिर्थंकर श्री महा-श्वर स्वामी ने जब इस धर्म का पुनरोद्धार किया तब जैनियों के उपदेश से लोगों के चित्त अघोर निर्दय कर्म से विरक्त होने लगे और धीरे-धीरे २ लोगों के चित्त में अहिंसा दृढ़ जन्म गई। उस समय के विचारशील वैदिक विद्वानों ने धर्म के रक्षार्थ पशुहिंसा विल्कुल पद कर दी और अपने धर्म में अहिंसा को आदरपूर्वक स्थान दिया और अहिंसा मंडन कर अपने धर्म को बचाया, यह सब अहिंसा

हि, मैं भी जैनदलों को सुनना समझना चाहता हूँ। वन समय महाराज साहिब के पास ऐसी हेन्दुगुप्त मौजूद थी जिसमें ऊपर संस्कृत श्लोक और नीचे अंग्रेजी टांगुना भी था। वह शिवाय साहिब को ही सो साहिब ने बहुत मुसी ने दे ली। जब बछने कोल्हापुर के राजा साहिब ने डाक्टर साहब ने खास तौर पर इन शब्दों में शिखारस की हि, वे हमारे गुठ महाराज हैं जान कर इनका अंग्रेजान बहुत तबज्जह और मेहरबानी से करें " इस बात का अगर डाक्टर साहिब पर ऐसा हुआ कि, जो बातें बातें ऊपर लिख आये हैं उन सबका इन्तजान महाराज साहिब के कल के अनुसार हुआ और अंग्रेजान करवे समय भी बहुत तबज्जह से जान दिया और साटारा वाले नेट मोर्तलालजी को भी अंग्रेजान के समय में मौजूद रहने दिया। और गुठ डाक्टर साहिब भी और अस्पताल के कुछ कर्मचारी हिन्दू अंग्रेज वर्ग रह भी महाराज साहिब को गुठ महाराज के नाम से बोलाये हैं दोनों साधु महाराज और इन लोग महाराज साहिब के पास रात दिन हाजिर रहकर कन्ने के अनुसार सेवा करने पाते हैं। और आहार पानी आदि का भी साधु नियमानुसार ही जान चलता है।

अंग्रेजान के पूर्व दिन कोल्हापुर राजा साहिब कोल्हापुर से खास श्री १००० श्री घासीलालजी महाराज के दर्शनार्थ सेठ कन्हचंदजी को टपा कोल्हापुर संस्थान के पंडित दिगम्बरी जैन को साथ लेकर निरुत्तम अस्पताल में आये और श्री महाराज के सामने हुर्छा पर

सं० १९६८ का चतुर्थांश निम्नलिखित जाने से बड़ा दुष्काळ पड़ा।
 पारंग से ही मेघराज की हड़ना देख, दुष्काळ संभव समझ, दया
 और दयानिष्ठ विषय पर महाराज भी ने अपनी अमृत तुल्य वारों
 का अनेक प्रकार रूप उपदेश देना प्रारंभ कर दिया। महाराज की
 के हरकत रोड के व्याख्यान में स्थानकवादी, देरावासी, लैन
 भाद्यों के वरांत दूसरे धर्म के भी संलग्न नमुन्य वसति
 होते थे और राइकोट वसील कीस्तियों से भरपूर और दुबरे हुए
 देशों की पंक्ति में है, जो भी जनतद्धार वर्ग या दूसरे अनेक-पूर-
 र्यों में शामिल हो देना कोई निकलेगा कि, जिसने व्याख्यान का
 लाभ न लिया हो। पूर्य की वरत परन्तु राष्ट्रीय पद्धति से देना
 उभोट उपदेश करवाते कि, नम्र में किसी को कुछ प्रश्न करने को
 आवश्यकता ही न रहती थी। अनेक शंकाओं का समाधान होना
 और अनेक प्रश्नों का निराकरण होना था।

पूर्य भी के प्रभाव का ठंका समस्त इतिहास में बहुत बुरा
 तक बड़ा हुआ था और राइकोट इतिहास का कोई स्थान होने
 से बाहर से जाने हुए जनतद्धार दरबार इतिहास को अत्यन्त
 प्रभाव करने का लाभ मिलता था। नामदारलोहरी के बाहर वरिष्ठ
 राइकोट पधारे तक व्याख्यान में वसति हुए थे। पूर्य की के ली-
 नारे बाहर से जाने वाले स्वर्गीय बन्धुओं का अत्यन्त सम्मान
 करने का साथ प्रबंध किया गया था। निम्न २ स्थान हरने के



अध्याय २०

परोपकारी उपेक्षा का प्रभाव ।

गोदान के भूतपूर्व दीवान गार्ग्य ने जब ग्यान महादुर बेजानजी नेहरवानजी भीमहाराज के व्याख्यान में पधारे थे, उस समय उनकी स्वास्थ्य ठीक न होने से एक साथ प्रंग्रह मजिद भी बैठ न सकते थे, तोभी महाराज भी के व्याख्यान में उन्हें इतना अधिक रस प्राप्त हुआ कि, वे करीब तीन रात तक ठहरे और महाराज भी का दया तथा परोपकार विषय पर जिसने "सासकर दुष्काल पढ़ने के घर से उस समय किस तरह दया करनी चाहिए और मनुष्य के साथ कितने अंश तक हर एक मनुष्य को अपना कर्तव्य अदा करना चाहिये" इस विषय पर विवेचन सुनकर तो उन पारसी गृहस्थ की आँखों से दड़दड़ आँसू बहने लग गए।

पूज्य भी सूत्रों के सिद्धांत समझा मनुष्य जन्म की सहायता दिया विशेष समयमें की हुई सहायता साधारण समय से सहजों गुली विशेष फल देने वाली है यह महादुरण दलील और फिलॉसोफी के सिद्धांत पर घटित कर प्रस्तुत समय को किस धैर्य से निभा लेना चाहिये यह वृद्ध अनुभवी से भी अधिक प्रभावोत्पादक रीति से श्रोताओं के हृदय में पिठा देते थे।

द्वितीय भाग भिन्न २ भोजनालय भोजन के लिये थे, इनके पिशाच
उनका भिन्न ३ आचकों की आर से टी पार्टी पिडमानी इत्यादि मी
दी व न भी। पाय भी क व्यवसायों का पान करने, संतोषकारक
अन्य जगह और व्यवसाय के अन्तर्गत तथा ज्ञानवर्धन की
कम नूतन इन में आन व त म। प नीर कर अ वे हुए दिनों में
म न नार दिन सदन ह म न हुए म य। अन्तः के उत्साही
क न प ड म नुप्रोत्साहनी नागनी बोद्धा और सुवर्धित
अन्य जगह और व्यवसाय सतत नय रहते रहते थे।



अध्याय २२ वाँ

परोपकारी उपेक्ष का प्रभाव ।

गोठल के भूतपूर्व दीवान मारिच का कान बड़ा और बैजनाजी मेहरवानजी भी महाराज के व्याख्यान में पगले थे, उस समय उनका स्वास्थ्य ठीक न होने से एक साथ प्रेन्ट मिनेट भाँके बैठ न सकते थे, तौभी महाराज भी के व्याख्यान में उन्हें इतना अधिक रस था कि, वे कभी पौन रात तक ठहरे और महाराज भी का क्या तथा परोपकार विषय पर जिसने " खासकर दुष्काल पड़ने के हर से उस समय किस तरह दया करनी चाहिए और मनुष्य के साथ कितने अंश तक हर एक मनुष्य को अपना कर्तव्य अदा करना चाहिये " इस विषय पर विवेचन सुनकर तो उन पारसी गृहस्थ की आँखों से दड़दड़ आँसू बहने लग गए ।

पूज्य भी सुन्ने के सिद्धांत समझा मनुष्य जन्म की महत्ता दिखा विशेष समयमें कीहुई सहायता साधारण समय से सहस्रों गुणी विशेष फल देने वाली है यह नडाहरण दत्तल और फिल्लामोफी के सिद्धांत पर घटित कर प्रस्तुत समय को किस धैर्य से निभालेना चाहिये यह वृद्ध अनुभवी से भी अधिक प्रभावोत्पादक रीति से आताओं के हृदय में बिठा देते थे ।

धोया है, मैं वैसे का (अन्न यज्ञ की शक्ति न होने से) दान न किया परन्तु जनसब समाज को अपनी देह दान में दे चुका हूँ, मैंने सिर्फ मंदिर में ही प्रभु को नहीं देखा, परन्तु अखिल विश्व में प्रभु की दिव्य प्रतिमा मैंने पूजी है। अन्य भक्तों ने पत्थर के पुतले में प्रभु माना, मैंने हर एक मनुष्य में माना, दुनियाँ में दयानिधि देखे हैं और सेवा की है। मैंने उन तीर्थों की तीर्थ यात्रा नहीं की परन्तु गरीब-यात्रा दुःखी-यात्रा मनुष्य-यात्रा की है, अर्थात् गरीबों की दीनता का, मनुष्य की मनुष्यता का, दुःखियों का दुःख का विचार किया है भगवान् को भजन के बदले मैंने अपने मोले भाईयों का भजन किया है, भक्तों ने एक ही भगवान् माना होगा, मैंने तो अनेक भगवान् माने हैं। प्रत्येक मनुष्य में एक २ प्रतिभा विराजमान है। मनुष्य के हृदय में जानूँवा है प्रवृत्ति, वन की शांति है तीर्थ-यात्रा महिमा है, और मोटाई है माहिक के दान का अनंत गुण पुण्य भार है। दूसरों ने पापियों के लिये पिछार बरसाया होगा परन्तु वे भी मेरी दया के पात्र बने हैं.....अन्य के अधु पड़ना ही मेरा धर्म है। सत्य मेरी शक्ति है और सेवा मेरी मजिद है।

प्रभुजी—(दीन बन्धु के सिर पर हाथ रख कर) मेरे भक्त! मेरी सेवा सच्चा सेवा है मेरी भक्ति सच्ची भक्ति है। तुम्हें रामचन्द्र का हृत्पद के रूप में देख, गति करने की जगह एक दीन



ମାମୁଲି ମୁକାବଲ କିମ୍ବଦନ୍ତୀ.

୧୯୩୩-୩୩୩ ୨୦

साधुजा प्रकट हो जाती है। तो फिर पड़े सिले योग्य पुरुषों को साधन से अर्ध लाभ प्राप्त हो इसमें क्या आश्चर्य है।

पूज्य श्री की प्रशंसा सुनकर जब इंग्लिश शिक्षा प्राप्त वकील वरिस्टर और सरकारी व्यक्तित्व इत्यादि उनके पास आने लगे। पूज्य श्री की इंग्लिश का विस्तृत अध्ययन न था। तो भी वे नई रोशनी वाले शिक्षित समाज पर अपने चारित्र्य बल से अपूर्व ह्राप डालते थे और धीरे-धीरे पूज्य श्री के प्रशंसक, अध्यात्म मार्ग के अतन्त्र व्यासक और धर्मपर सम्पूर्ण भक्ता रहने लग जाते थे। श्री पूज्य श्री के संसर्ग से कई विद्वानों ने बड़ा भारी लाभ उठाया। मिसिज स्टीवनसन नामक एक अमेरिजियन युवती भी पूज्य श्री के व्याख्यान का लाभ कुर्सी पर नहीं परन्तु नीचे बैठकर लेने लगी। पूज्य श्री के साथ धर्मचर्चा में उसे बड़ा ज्ञानन्द प्राप्त होता। संवत्सरी के प्रविशमान में उपस्थित हो सब विधियों की यह ज्ञाता बनी थी। यह बड़ी व्याख्यान में सुदृढता बांधकर बैठती। व्याख्यान के अंशों को स्मरण कर लेती। इस विदुषी अमेरिजियन युवती ने जैन धर्म पर Heart of Jainism नामक एक पुस्तक लिखी है उसमें उसने पूज्य श्री के सम्बन्ध का उल्लेख भी किया है।

The present writer had the pleasure of meeting the Acharya of the Sthankwasi sect, a gentleman named Srikalji, whom his followers hold to be the 78th

साधुधर्म की अपेक्षा में आधुनिक मरज अपेक्षा दिया। मदासजी बहुत गुणवती और सिद्धांतरण की विद्वान् थीं, उन्होंने 'तदेति' कहकर वह अपेक्षा फिर बढ़ाया, ऐसी मदासजी वर्तमान समय में होना मराहिस है। गौडन भयादे के आचार्य श्री जमराजजी महाराज जो नराभव में प्रसूत हुए थे, वह उपाधय मार्ग में होने से द्वार पर न सुख साता पूर्व छहजही धर्मोत्पाद कर आचार्य श्री सुरा हुए थे।

मदराज जी के शिष्य मुनि भी दृग्मनलाक्षजी महाराज ने इस चतुर्धन में नाराज उपाधय की सपथ्यों की थी और उनके अंतिम उपाधय के दिन नामदार ठाकुर साहिब के हुक्म से कमाई करने पड़े रहने लगे।

कठिनाई नाराज के शिष्य शिवा में सबसे अधिक आता है। साधु शिवा में धार्मिक शिवा का अभाव होने में नई राशियाँ नाराज हृदय में आर्यावर्त के अध्यात्मवाद की अपेक्षा पश्चात्त जड़ता की ओर विशेष लक्ष होने के अपन कई हानियाँ दर्शाते हैं। नाराज की शिवा से शिचित हुए कई नवयुवक धर्म में दृष्टा हो न जाते हैं ऐसे कितने ही सुरा पूष भी के धर्मोपदेश से या सत्संगम से धर्मोपदेश के मार्गास्तु हो गए।

य के पारिवर्त और बाणों का प्रभाव ही ऐसा अलौकिक 'सत्सङ्गात् भवति हि साधुता यज्ञानाम् अर्थात् सत्सङ्ग से रात पुण्यों में भी

संवत् १९६८ के आषाढ में मोरबी में बालेरा का वनस्पति प्रारंभ हुआ। कितने ही धीमे-धीमे होकर घर बाहर जाने की सैयारी में थे, परन्तु पूज्य साहिब के पधारने से यह बीमारी नरम होगई गी। एक दिन संध्या समय निद्रा की वे पाश खाध्याप करते पवन बदला हुआ देख ऐसे प्राकृतिक परिवर्तन का अनुभव करने वाले पूज्य साहिब ने समीप में बैठे हुए मनुष्यों को तुरंत सनभ्याया कि, यह पवन का परिवर्तन सुघरने की आशा दिलाता है ऐसे समय भी शांतिनाथजी के जाप से कई जगह शांति हुई है भिक्षु-मंडल के साथ पुत्रावर्ग बहुत रात तक पूज्य भी के पास धर्मपत्रों पर धर्मज्ञान बढ़ाते थे। दूसरे दिन सोमवार की रक्षा होने से भी शांति जाप की योजना की गई और ५१ उत्साहियों से वही स्कूल में नाचे के शांत भाग में दरोदर बजे १२ सानाधिक प्रश्न कर जाप करने की रानगी सूचना इस पुस्तक के लेखक को मिली। परिणाम स्वरूप बाह्य का वंश लगते ही भी शांति-नाथ का जाप प्रारंभ हुआ अवासास जाप होने के पश्चात् सब साथ मिल कर पूज्य भी के पान संगतिक सुनने गये। इस जाप के समय की शांति और जलौकिक द्रव्य तथा पवित्र आंदोलन के फलशायी ने उपायित रुजनों के मस्तिष्क को इतना अधिक तर कर दिया कि, वे अपनी जिंदगी में ऐसा समय प्रयत्न ही है और अपूर्व है ऐसा कहते थे। शुभ शकुन समन सब साधकों को नारिपत दिये थे, पूज्य भी के अनुमान -

हृदय में से अपने प्रहस्य करने योग्य बहुत से जाते और लोग मुत्तकंठ से कहते थे कि, यहाँ तो अभी 'चौथा आरा' बर्तता है। श्री जम्बूधरिन्द्र के ऊपर का पूज्य श्री का व्याख्यान हमेशा थोड़े बहुत मनुष्यों की आंख तो मीली कराता ही था, चलती मां चिलती, खांडो पापड़, उदयपुरना राणाओं, जोधपुर के महाराजाओं, जैपुर के महाराज पर एक कवि की लिखी हुई हुंडी, कच्छ के लाखवा फुलाणी इत्यादि असंख्यकारक तथा ऐतिहासिक दृष्टांतों से श्रोतार्यों पर बड़ा भारी असर होता था और व्याख्यान का लाभ चूकने वाले अपने अंतराय कर्म के लिए दिसगीर होते थे ! शावकों की दुकानें तो व्याख्यान बाद ही खुलती थीं ।

बनावटों और कल्पित कथाओं के वे कायर नहीं थे, सत्य कथा या घने यहाँ तक अपने अनुभव में आई हुई या ऐतिहासिक दृष्टांतों से ही पूज्यभी अपने सिद्धान्तों को पुष्टि देते थे । उन्होंने अपने काठियावाड़ के प्रवास में इसके प्राचीन अर्वाचीन इतिहास का अभ्यास किया था, भिन्न २ राज्य के अनुभवी अमलदार और विद्वानों से काठियावाड़ की कीर्ति का पान किया था । मैं हमेशा एक घंटे भर पूज्यभी को इतिहास पढ़कर सुनाता था- प्रसिद्ध बका रा० रा० दफ्तरी मगनलाल 'साधना, नामक पुस्तक समझाते और देसाई बनेचंद राजपाल जैसे भीमन्त भायक दोपहर की निद्रा को रक सरफारख दोपहर को १२ से २ बजे तक इतिहास इत्यादि के पुस्तक पढ़कर सुनाते थे । जो

हमेशा स्वस की टट्टी के पवन में दोपहर में विमानित होने वाले निशा को याद न कर पूज्यश्री के प्रताप से गयी दोपहर में पढ़ने में लीन हो जाते थे, उनकी मुस्तो अ० सौ० नानूबाई तथा उनकी विद्या-विजाली पुत्रिया भी पूज्यश्री की सेवा कर विविध रीति से ज्ञान की वृद्धि करती थीं, गौडस सम्प्रदाय की आर्याजी मणीबाई ने पूज्यश्री को सूत्र सिखाये थे, मारवाड़ी आवक आविका दर्शन करने आती उनके लिये पूज्यश्री के सामने प्रथम पक्ति में ही जगद् रिम्बंरकखी जाती थी और देखाई बनेबद भाई जैसे आने वाले आवकों को खड़े हा सम्मान कर आंग बिठाने थे, श्रीमती नानूबाईने निडर हो पूज्यश्री से कह दिया था, कि ' मारवाड़ी आवकों को आप चाहे जितने दंड मर्त्यरूप शरी गिने परन्तु उनके मैकड़ा ६० नो गने में या हाथ में या किसी जगह डोरिया या तार्थीज लावने वाले हैं, श्री त्रिनंथर देव ही उदा या मर्त्यरूप क मादितिये ही धारण किया तो हम कुछ कहना नहीं है परन्तु ना दूसरों के हाँ तो स्वर्ग पर उनकी पूर्ण भडा य विद्या नद के जेपा हम मानेंगे। श्रीमती नानु बाई क १ तथा प्रमोदपाल पुत्र श्री के पुत्र नम्रत काश्य बना कर कर्तु और जितना लाभ लूट सकते थे लूटती थीं। पूज्यश्री मादिव ने उनके शास्त्री के पास से मुनिश्री चादमलजी इत्यादि को संस्कृत का अभ्यास कराया था।

पूज्यश्री पंद्रह शताब्दी महित शताब्दी रहे थे। पूज्यश्री का शिष्य संदत्त स्वाध्याय और ध्यान में इतना अधिक लीन रहता था कि

उनमें से दो चार को भी कभी एकत्रित हो गप्प सप्प मारते या
व्यर्थ हंसी दित्तगी करते हमने नहीं देखा। स्वाध्याय और शास्त्र बचनों
की धुन लगी रहती थी। संध्या को प्रतिक्रमण किये बाद ज्ञान चर्चा
और प्रश्नोत्तरों की धूम मचती थी। प्रतिक्रमण पूर्ण होते ही जैनशालां
के विद्यार्थी पूज्य श्री को वंदना करते और सब हाथ जोड़ स्तुति
बोलते थे। पूज्य श्री को प्रिय नाँव की स्तुति हमेशा की जाती थी।
उस समय पूज्य श्री नयन मंद उसमें तल्लीन हो जाते थे। पूज्य श्री ने
उसे कंठस्थ याद किया था और पूज्य श्री के साथ वाले मुनि मण्डल
ने भी इस स्तुति को कंठाग्र करालिया था।

गुणवंती गुजरान (यह राग)

जयवंता प्रभु वीर, अमारा जयवंता प्रभु वीर ।

शासन नायक धीर, अमारा जयवंता प्रभु वीर ।

शास्त्र सरोवर-तरत आपनुं, तत्व रत्ने भरपूर ।

तेनां न्हातां तरतां नित्ये, शुद्ध धाय अम जर । अमारा

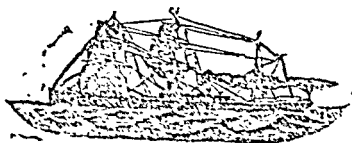
तात्विक भावे वैह प्रकाशयुं, वास्तविक तत्व-स्वरूप ।

आस्तिकतामां समिये एधी, आनन्द धाय अनूर । अमारा

आप प्रकाशित ज्ञान-वर्गीये, स्त्रील्या छे बहु फूल ।

तुंगंधी वायुनी तरत लहरधी, अमे छीए मरगूल । अमारा -

भालालजी स्वामी ह्यो विद्या विशारद शास्त्र वैया प्रभु पारने पात्र
 अधन उधारी करीने कृपा मुनि आशिर्वाद अनेक पात्र या ।
 महान् आभार 'नयुरपुरी' संघ आपतणो स्वामी विलमां माने.
 दर्शन आप तयां शिष्य-मंडली सहित धर्मा घणै पूरव दाने ।
 एषा महत्त्व शिष्य संघाते चन्द्र-तुल्य गुरु पूर्ण-प्रकाशी ।
 मोरवी संघ हृदय कुमुदो दर्शन यी प्रभु धाय विकारी ।
 पाषन करी भूमि पाद—पद्मयी सहज दयालु दया दिले लावी
 पर्याकुलो करो जीवित, उपदेशानृत—धारि वरतावी ।
 एव इच्छ आगमनधी आपना कल्याण-कारक अम उर भावी ।
 संसार-सागर तारो 'शिव' कहे अरिहंत अरिहंत मुख भजावी



अध्याय २८ वाँ ।

मोरवी में तपश्चर्या-महोत्सव ।

सोमवार या रमा (अवकाश) के दिन मोरवी में विराजे मुनियों के पास जैन और जैनेतर विद्वान् वकील और अमलदार मिल कर ज्ञान चर्चा चलाते थे और इंजमास्टर तथा राज बैराग्यरों में महामहोपाध्याय सात्तरोत्तम श्रीयुन शंकरलाल मादेश्वर भी प्रसंगोपात् पूज्य श्री के पास आते थे ।

पूज्य श्री के पधारने से ही जग विरलकुज बंद होगया इसलिये तत्काल नगर निवासियों की पूज्यश्री की ओर पूज्य-बुद्धि होगई और आवाज पृथ्वी सबकी यह मान्यता थी कि, महारमाओं के पधारने से ही यह दुःख दूर हुआ । मार्ग में निरुजते तब राजा महाराजाओं को भी न मिले ऐसा आन्तरिक मान सब कोम और सब धर्म के अनुयायों की ओर से आपसी मिलता था । तपस्वी मुनि जी छननचालजी ने ६१ उपवास किये थे ऐसी तपश्चर्या मोरवी में प्रथम ही होने से आवाजों में भी अत्यंत उत्साह था । मुबद्द और दुबद्द दोनों व्यासधान के समय लगतार ६१ दिन तक प्रभावना अखंडित गुरु रही जिसमें मरुवा प्रभाव तो यह था कि, प्रभावना के लिये छिपी को कुछ कहना न पड़ता था ।

पारण के दिन पूज्य भी तपस्वीजी के साथ गोचरी पधारे में और पार घंटे तक फिरकर बीच में किसी गृह को न टाकते सून्ना मिता यह आहार पानी से सरो लाम पहुंचाया था। चितने ही मनुष्यों ने पारण का प्रथम लाभ मुन्नेमिले तो मैं जमुक प्रतिज्ञा करता हूं ऐसी पूज्य भी से विनय की थी परंतु पूज्य भी तो पक्षपात त्याग कर रंक भीनेत सधके यहाँ पधारे थे ।

तपस्वीजी के दर्शन करने के लिये देशावासों ने कई भावक एक-त्रिंश हुर थे । बनवा योग्य स्वागत हुआ था, तपस्वीजी के पूर अंतिम दिन गंधर्व पौषय जनेक हुर थे, और पारण के दिन बसव जेना हरप था। जीवों को अभय-दान दिया गया नूने लंगड़े जानवरों को गुड़ भिलाया गया और जनेक प्रकार के दान पुत्त हुर। जीव-दया का पंड हुआ था जितसे कई जीवों को शांति पहुंचाई थी ।

पूज्य भी का शिष्य—मंडल हमेशा संपन्न से सम्बन्ध रखने वाली मित्राओं और स्वभाव में दलीन रहता था और परदेश में पत्र व्यवहार करना व्यवहारिक होने से ज्ञान पर्वों के सिद्धांत अन्य प्रहृति में पड़ने का कोई कारण ही न था ।

प्रतिजनक शिष्य पश्चात् खास शेष या पान के प्रादुर्भाव के लिये क पांश नमन हुर बाद दोनों हाथ जोड़ मुद्र हरप से आत्म वि-मुक्ति की ओरभी की दापन होली थी और पूज्य जी स्वभाव-

कहा तुमने गुरुमुख से सुना है वो सुने पढ़ाओ । मेरा यह नियम है कि, कोई भी मूढ़ एक मनपसिधी से पढ़ फिर स्वतः पढ़ू जिसमें भी चंद्ररक्षति जैसा शास्त्र गुह्यगन से हो पढ़ना ऐसा मेरा इरादा है । तब मैंने कहा, बेशक, आपका आग्रह है वो आप और हम दोनों साथ पढ़ेंगे । उसी दिन से पढ़ना प्रारंभ किया । शास्त्र ही एक २ प्रति हो उनके पास रखने दूसरी एक प्रति टीकावाली लेकर दोपहर को एक बजे मे संघा के पांच बजे तक पढ़ना प्रारंभ रखे थे । लगभग पन्द्रह दिन में चंद्ररक्षति मूत्र पूर्ण किया पूज्य भी भी समझ और प्रज्ञा इतनी हो सरस कि, चंद्ररक्षति से भी कुछ-कुछ कोई गहन विषय हो वो भी वे स्वतः अच्छी तरह समझते, और दूसरों को समझाते, परन्तु एक साधारण मूत्र भी आप स्वतः न पढ़ें पर भावना विभूति अथिह विनय और विवेक से भरते हुए है पर सरस ही ध्यान में आजाता है इसलिये उनकी मूर्ति में कहा गया है कि,

“ विद्याविनाशरहिता विनयेनपुनः ”

“ प्राचीन यः सर्वज्ञानं ज्ञात्वा हो नो नेन ।

विद्वान्ने हो पृथक् प्राचीन पद्धति का ही ज्ञान हो है के विद्वान्ने हो

पृथक् ज्ञान हो रहे सर्वज्ञान हो, संप्रत्यक्ष हो के ज्ञाने ज्ञान हो

के भी हो है । पृथक् ज्ञान जो हो है ज्ञान हो के ज्ञान हो

नमें ऐसी खूबी थी कि, पुराने तथा नये दोनों वर्गों को बहुरूपी-
 कर हो जाती थी। दरबार तथा अन्य भोतालों ने दूसरे दिन फिर
 व्याख्यान के लिये आमंत्रण दिया, तब दूसरा व्याख्यान बीमा सीमासी
 की धर्मशास्त्रा में दिया गया था। दोनों व्याख्यानों का अस्तर आत्म
 प्रज्ञा पर अवलम्बित हुआ। सारांश सिर्फ इतना ही कि, पूज्य भी स्मृति
 को चाहे मान देने तो भी आंतरिक योग्ययोग्य का विचारकर
 स्मृति से आत्मा के भेदाभेद विचार को अधिक मान देते थे। इसी
 लिये नये और पुराने दोनों पद्धति को पसंद करने वाले जल्दी अनु-
 कूल हो जाते और पूज्य भी जिसमें अधिक भेद हो उसका अनु-
 करण कर लोगो को लाभ देते थे।

पूज्यपाद का साहित्य पर शौक।

पूज्य भी जैन-शास्त्र के समर्थ विद्वान् थे। बहुसूत्री, गीतार्थी,
 शास्त्रवेत्ता, आगमवेत्ता जो २ उपनाम उन्हें लगाये जायें उनके योग्य
 हैं। भारवाह की ओर मुनिवर्ग में संस्कृत का अभ्यास करने की प्रथा
 प्रचलित होती तो आचार्य भी संस्कृत के समर्थ पंडित होते, परंतु
 उस तरफ इसका रिवाज न होने से उनकी यह इच्छा मन में हो
 रह गई थी। बाँकानेर में थोड़े दिन के परिचय पश्चात् पूज्य भी ने
 निवेदन किया कि, अपना भावी चातुर्मास साथ हो तो तुम्हारे पास
 बने तो चांदमलजी छोटे साधु को संस्कृत का अभ्यास कराऊँ

2

3

वर्ष से दुखी हूँ मेरे लिये मेरे पिताने दवाई में हजारों रुपये खर्च कर दिये हैं परन्तु आराम नहीं हुआ । तब पूज्य भी ने कहा कि, दवाई त्याग दो नवकार मंत्र गिनो और भट्ठा रक्खो । उसी दिन से उन्होंने दवाई छोड़ दी और नवकार मंत्र गिनना आरंभ किया थोड़े ही समय में उन्हें बिल्कुल आराम हो गया और वे पूज्य भी के व्याख्यान में पाँच २ चलकर आने लग गये थे । पहिले वैष्णव-धर्म पालते थे परन्तु पूज्य भी के सद्गुणों से सब कुटुम्ब जैन-धर्म पालने लग गया ।

इस तरह जोधपुर के चातुर्मास में अनेक उपकार हुए । जोधपुर के इस चातुर्मास का ध्यान दिलाने के लिये कायस्थ शांति के एक लज्जन डाक्टर रामनाथजी कि, जो अभी गदगालोर में हैं अपने स्वतः के शब्दों में लिखते हैं ।

पूज्य भी १००८ भी भीलालजी महाराज का चातुर्मास मारवाड़ के मुख्य नगर जोधपुर में हुआ, उस समय इस दास जो भी आपके दर्शन व साधंग और उपदेश सुनने का गौरव प्राप्त हुआ । आपकी वांछि, विस-शुद्धि और उपश्रय के परमाणु का आभास इतना जबरदस्त पड़ता था कि, भोवा लोग हर्षरूपी सुधा-समुद्र में लहराते हुए मानों तुरियावरण का आनंद प्राप्त करते थे ।

अचल आत्मभद्रा, आत्मशक्ति का विश्वास हो और तुम परोपकार के लिए आत्मभोग देने को तैयार हो तो तुम्हारा प्रयत्न क्यों न सफल हो ? अवश्य हो । अभी ही तुम यह दृढ़ प्रतिज्ञा करो कि जबतक यह हिंसा न रुकेगी हम अन पानी प्रदण न करेंगे, सिपाही जब तुम्हारे सामने कुत्तों पर गोली चलाएंगे तब तुम निडर हो कहें दो कि प्रथम हमारे शरीर को गोली से बाँध दो और फिर हमारे कुत्तों पर गोली चलाओ, अगाध मनोबल और अखंड आत्मबल वाले इन महान् पुरुष के सुत्तारविंद से निकले हुए इन शब्दों ने मोठामोठों के हृदय पर अद्भुत प्रभाव जमाया, पूज्य श्री के सदुपदेश से ऐसी सघोट उत्तर हुई कि उसी समय कई आवकों ने खड़े हो महाराज श्री के पास यह हिंसा न रुके वहाँ तक अन पानी लेने का त्याग कर दिया व्याख्यान के पश्चात् कई भावक इकट्ठे हो नवाब साहिब के पास गए और अर्ज की कि हमें जीवित रखना चाहते हो तो हमारे आश्रित इन कुत्तों को भी जीने दो और हमारे प्राण की आरक्षी परवाह न हो तो हम भी कुत्तों के लिए प्राण देने को तैयार हैं इस हमारी विनय पर गौर फरमा कर जैसा आपको योग्य लगे वेत्ता करो, नवाब साहिब के पास व्याख्यान की हकीकत प्रथम ही पहुँच चुकी थी, वे अत्यन्त प्रभावत्सल थे, उन्होंने महान्तों की अर्ज शांतिपूर्वक सुन जरूर ही न नारने का आर्डर नि

अध्याय ३५ गाँ।

उदयपुर का अपूर्व उत्साह ।

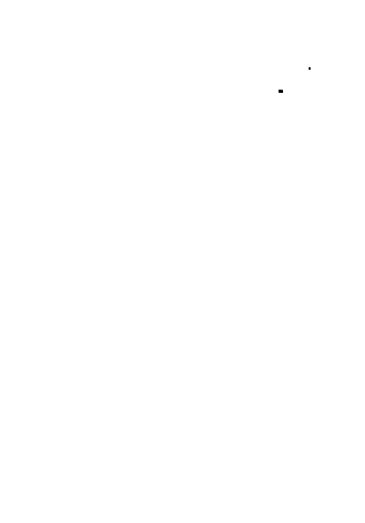
उदयपुर में बजावनी मोहरें के नाम से प्रसिद्ध एक विमान
महाल है, वहाँ हर वर्ष मुनिराजा के जन्मदिन के दिन वहाँ पर
भी के जन्मदिन की प्रथम जन्मदिन मनाते हैं तथा जन्मदिन के
पूरे भी कादमासकी का उदयपुर जन्मदिन का दिन मनाते हैं।
इसके बाद नेमराजियों ने बहुत से ही बजावनी मोहरें की मना
लेनी भी इसलिये पूरे की है। उदयपुर के लोग जन्मदिन के
दिन आशीर्वाद महाल के लिये उदयपुर आते हैं। उदयपुर
की, कई बजावनी लोको ने हमारे महाल में भी उदयपुर के
ऐसी इच्छा की है, वहाँ पर उदयपुर के लोग भी उदयपुर
जाने के लिये उदयपुर के महाल में आते हैं। उदयपुर के
लोग वहाँ पर उदयपुर के महाल में आते हैं। उदयपुर के
लोग वहाँ पर उदयपुर के महाल में आते हैं। उदयपुर के
लोग वहाँ पर उदयपुर के महाल में आते हैं। उदयपुर के

इस प्रकार उदयपुर के लोग उदयपुर के महाल में आते हैं।

उदयपुर के

उदयपुर के लोग उदयपुर के महाल में आते हैं।

उदयपुर के



एजेन्ट थे वे पूज्य श्री के दर्शनार्थ कई समय आये थे और पूज्य श्री का व्याख्यान बहुत प्रेम-पूर्वक सुना करते थे, इतना ही नहीं परन्तु व्याख्यान के पश्चात् दूसरे समय भी वे पूज्य श्री के पास आते और सात्विक विषयों पर प्रश्नोत्तर तथा धर्म-पर्याप्तता से थे, इस महानुभाव अंग्रेज ने पत्नी वगैर जानवरों को न मारने की प्रतिज्ञा ली थी ।

दूसरे एक अंग्रेज पादरी खेरंड हो जेम्स रोपर्ट एम. टी. टी. टी. कि जो वयोवृद्ध और समर्थ विद्वान् हैं और अभी जो बिलायत गए हैं वे भी महाराज श्री के दर्शनार्थ आये थे । महाराज श्री के साथ वार्तालाप करने से उन्हें अपार आनन्द हुआ और वे अपने पास की एक पुस्तक महाराज श्री को भेंट करने लगे, परन्तु महाराज श्री ने इसका स्वीकार न किया । साधु के बड़े नियमों से साक्षि आश्चर्य प्रसन्न हो गए ।

इस आठुनाई में एक दिन पूज्य श्री ने धार्मिक शिक्षा की आवश्यकता दिखाते हुए बहुत असरकारक उपदेश दिया और लघु-पुष्प से ही बालकों के हृदय पर धर्म की छाप गिराने की आवश्यकता दिखाई । उपदेश के अन्तर से हृदयपुर के सब बालकों को शिक्षा देने के लिए एक पाठशाला खोली गई । भाई रतनलालजी मेहता ने परिश्रम से यह पाठशाला वर्तमान समय में अच्छी तरह

मनुष्य-जीवन में दाखल हुआ है उसे दिव्य जीवन कैसे बिताना और उस दिव्य जीवन को बिता सिर्फ आनन्दमय जीवन सन्धि, धनानन्दमय जीवन अंतर्में किस रीतिसे प्राप्त करना, यही सिखाना धर्म है ।

धर्म-ज्ञान प्रचार की प्रभावना में महान् पुण्य समाया हुआ है इसलिये एक लेखक योग्य षट्गार निकालता है कि "It is the duty of the thought-ful among the Jains to see that a healthy knowledge of the valuable and basic principles of Jainism is spread liberally." सर नारायण चन्दावरकर लिखते हैं कि "सिर्फ बुद्धि के खिलने की कोशिश नहीं, अंतःकरण भी खिलना चाहिये । समाज, देश तथा जगन्की शांति के लिये हृदय की शिक्षा हृदय के विकास की आवश्यकता है और जबतक प्रजा के हृदय विकसित न होंगे वहांतक सच्ची मरणा कभी नहीं आसकी ।

यूरोप में जड़-बल का जोर और आध्यात्मिक बल की अनुपस्थिति लड़ाई के समय प्रकट होती है.....जड़बल पर आध्यात्मिक बल का प्रभुत्व होना अवश्य जरूरी है, जब तक इस बल की सत्ता न झुकेगी वहां तक कायम की सुलभ शांति टूटे-गोचर नहीं हो सकती ।

पत्थर जैसा हृदय भी पिघल जाय, इस उपदेश का उपस्थित जमीनदारों के हृदय पर भी बहुत भारी असर हुआ और उन्हें अपने आपकृत्यों के कारण बहुत २ पश्चात्ताप होने लगा। व्याख्यान समाप्त होने पर महाराज भी ने तथा महाजनों के अप्रेसरों ने इन लोगों को यह पापी रिवाज बंद करने की कोशिश करने के लिए समझाया, तब कितने ही लोगों ने तो ऐसा करने के लिए प्रसन्नता पूर्वक हां कहा, परन्तु कितने ही जमीनदारों ने महाजनों से ऐसी दलील की कि आप महाजन लोग हमारे परतनिक भी दया नहीं करते, वधवार दिये हुए रुपयों के ब्याज में एक के देने तिगुने धान ले लेते हो और जब कर्जा वसूल करना हो तब भी दया नहीं रखते ।

यह सुन उपस्थित महाजन लोगों ने ऐसी प्रतिज्ञा की कि दर मास प्रति छैकड़ा १॥॥ रुपया से ज्यादा ब्याज हम कदापि तुमसे न लेंगे । इसके उत्तर में जमीनदारों ने वचन दिया कि हम भी शिकार नहीं करने का बंदोबस्त करेंगे । दूसरों को उपदेश देने के पड़िले अपना आचार शुद्ध होना चाहिए, 'परोपदेशो पांडित्यं' इस जमाने में नहीं चल सकता, पड़िले अपने पांवपर पाव सहन करना सीखो ।

पश्चात् इन जमीनदारों तथा महाजनों में से कितने ही उत्साही सज्जनों के संयुक्त प्रयत्न से थोड़े दिन बाद कई ग्रामों के मिल करके ३०० जमीनदार व्यावर में आये, उन्हें महाजनों की तरफ

उपरोक्त पंदेशस्त होने से हजारों लाखों जीवों को अभयदान मिलने लगा और सैकड़ों लोग पाप की खाति में गिरते कई अंश में बच गए ।

इस मुजिथ पूज्य महाराज भी के यहां पधारने से अत्यन्त उपकार हुआ । तथा यहां के जोसवाल भाइयों में कुसम्प थी जिससे तीन तहें होगई थीं और साधुमार्गी मंदिरमार्गी भाइयों में भोज सम्बन्ध में मतभेद हो परस्पर मन दुखित होगया था, परन्तु श्रीमान् आचार्यजी महाराज के पधारने से उनके व्याख्यान का लाभ शाह उदयमलजी तथा शाह भूलचंदजी फांकरिया इत्यादि कितने ही मंदिरमार्गी सज्जन लेते थे । महाराज भी के सदुपदेश के प्रभाव से विरादरी में एकमत हो तीन तहें इकट्ठी होगई और छोटे बड़े सब ऋगड़ों का परस्पर समाधान पूर्वक अंत हो विरादरी में कुसम्प की जगह सुसम्प स्थापित होगया ।

मौजे झाक गए और उन्होंने जमीनदारों से कहा कि तुम हवाई धनवालो और उसमें जो खर्च लगे वह हम से लेओ, वध लोगों ने कहा कि हमने हममें से चन्दा कर हवाई धनाना ठहरा लिया है इसलिये महाजनों से इसका खर्च न लेंगे और जो आहूड़ भी पूज्यजी महाराज के उपदेश से हम लोगोंने छोड़ी है उसका हम बराबर अमल करते हैं और कराते रहेंगे ।

जवाबदारी, दीर्घदृष्टि और कर्तव्य विषय पर समय के अनुकूल अत्यन्त उत्तम रीति से विवेचन किया और भीमान् शोभाचंदजी महाराज ने स्वयं विर मुनि भी चंदनमलजी महाराज द्वारा आचार्य की पद्धति की ओर वाद समयोचित व्याख्यान दिया था । उसमें पूज्य श्री भीलालजी महाराज के अनुपम उदार गुणों की मुक्तकंठ से प्रशंसा की थी । आचार्य श्री शोभाचंदजी महाराज ने स्वयं पूज्य श्री भीलालजी का अच्छी रहंगा ऐसा कहा था । हम आशा करते हैं कि पूज्य श्री शोभालालजी साहिब तथा उनकी सम्प्रदाय के छात्र और आदक अपने वचनानुसार पूज्य श्री के परिवार पर ऐसा ही भाव रखेंगे ।

अजमेर से उम्र विहार कर भीजी महाराज बीकानेर होकर सुजानगढ़ पधारे । और वहां सं० १९७२ के फाल्गुन शुक्ल ६ को शुक्रवार के रोज भीमान् चंदजी संपत्ती के बनाये हुए मंदिर में बीकानेर निवासी श्रीगुप्त पोतरमलजी को दीक्षा दी । आपकी उम्र उस समय सिर्फ २० वर्ष की थी । आपका ज्ञान बढ़ा पड़ा था तथा वैराग्य भी अत्यंत उत्कृष्ट था । दीक्षा लेने के पहिले उन्होंने बहुत सा द्रव्य दान पुत्र्य में खर्च किया था । और दीक्षा महोत्सव में भी हजारों रुपये खर्च किये थे । बीकानेर के भी बहुतसे भाई इस अवसर पर पधारे थे और मंदिरमार्गी भाइयों ने भी अनुकरणीय भावभाव दर्शाया था । इस समय

इत्यादि के हलुके बहरानों और दूसरे साधुओं पर मिथ्या दोषारोपण करना यही क्या अपना धर्म है ? यह बात सोचना चाहिये, नहीं तो इसका फल यह होता है कि परस्पर द्वेष भाव बढ़ता जाता है और साथ ही अपनी मूर्खता प्रकट होती जाती है । आप लोगों को तो ऐसा चाहिये कि सब से प्रेम रखें और अनुचित प्रवृत्ति से साधु भावकों को रोकें । तेरहपंथी साधु साध्वी कहते हैं कि तुम्हारे घर से तो दूसरी सम्प्रदाय के साधु आहार पानी लेगए तो तुमने क्यों बहराया ? इसलिये अब हम तुम्हारे यहां गोचरी न आवेंगे, जो अब तुम ऐसी प्रतिज्ञा लो कि तेरहपंथी साधु के सिवाय अन्य किसी को दान न देंगे, वरन् हम तुम्हारे यहां आवेंगे । ऐसा कह कइयों को प्रतिज्ञा देते हैं । पाठक ! विचार करें कि जो साधु पंच-नहाव्रत लेकर भी राग द्वेष नहीं त्यागते और डलते इसकी गृद्धि करते हैं तो फिर गृहस्थों का तो कहना ही क्या है ? इसलिये आप लोगों से यह विनती है कि कुछ दिल में विचार करो गृहस्थों का अर्भग द्वार है और दया दान से ही गृहस्थाश्रम की शोभा है, कल्याण है । महावीर भगवान का दया दान पर ही परम उपदेश है । उसे बंद करना जिन-वचनों का उत्थापना करने के समान है । इसलिये भविष्य कालका विचार कर सब भाई सन्म रखें और विद्याकी रत्नवि करें और जो मिथ्या चाल पड़ गई है उसे सुधारें । यह काम जैन श्रुतान्वर तेरहपंथी समा को हाथ में लेना चाहिये ।

प्रतापमल नाहटा, मुंदातर

राज्य भी बीकानेर (मारवा)

यही के बिहार दरम्यान बीछनेर के सैकड़ों सावक तथा अजमेर से राय सेठ चांदमलजी साहिब तथा दी० ब० हम्नेदमलजी सोढा इत्यादि दर्शनार्थ आये थे ।

बड़े २ करोड़पतियों को इन महापुरुष की पदरज मस्तक चढ़ाते देख उनको अपमानित करने वाले कितने ही ठेरदपंथी भाई आत्मन्त लज्जित हुए थे ।

महापुरुषों के तो ऐसे बृष्ट ही कीर्ति कीट की दिवाल रट हरबे में छिमेंट के समान है ।

भव की आवश्यकता नहीं रहती, परन्तु जब जहाज भर समुद्र में आता है और डूबने की तैयारी में रहता है तथा बैठने वाले भयभीत रहते हैं तब ही कप्तान के कार्य कौशल्य की सही कसौटी होती है सचे कटाकटी के मानले में ही मनुष्य की चतुराई, अनुभव और विवेकता की परीक्षा होती है और ऐसे समय ही मनुष्य अपनी महान् शक्ति दिखा सकता है..... जबतक हम कसौटी पर नहीं चढ़ें, जबतक गुप्त शक्ति सामान्य संजोगों के समय प्रकट नहीं होती तबतक हमें अपने आंतरिक बल का वास्तविक भान भी नहीं होता। यह शक्ति आपात्काल में ही प्रकट होती है क्योंकि वह शक्ति सम्पादन करने के लिए हमें अंतरगहनमें बैठने की आवश्यकता है हर एक कार्य में परिणाम को प्रमाण में ही कार्यकी अपेक्षा है।

जोधपुर के संघ के मार्फिक व्यावर-नरेशहर के श्री संघ ने भी जाबरे वाले संघों को समाधान की ही सलाह दी और जब बन्होंने दूसरी पूज्य पदवी प्रकट की तब चतुर्विध संघ की सम्मति न थी ऐसा व्याख्यान में ही प्रगट होगया था और समस्त श्री संघ के संख्या बन्ध मनुष्यों की सही से हमें यह मंजूर नहीं ऐसा, लिख भेजा था।

मालवा मेंवाड़ से बहुत दूर पंजाब में पूज्य श्री की आज्ञा से बिचरते और जन्मू करमीर में एक संत धीनार होजाने ने वही

बहुत दिनों से ठहरे हुए महाराज श्री मन्नालालजी स्वामी जो सत्य हकीकत के पूरे ज्ञाता न थे और सरल स्वभावी होने से दूसरों की युक्ति प्रयुक्ति में भुला जाने जैसे हलुकर्मी हैं, वे दूर के अपरिचित क्षेत्र में आसपास के संजोग बिना जाने और पूज्य श्रीजी आशा में विचरते होने से उन्होंने पूज्य श्री जी बिना आशा लिखे ही यह पद स्वीकार करने का साहस किया ।

इस पर विचार करने से सिर्फ ममत्व ही मालूम होता है । छद्मस्व मनुष्य भूल कर बैठते हैं, इसलिये दीर्घदर्शी शास्त्रकारों ने प्रायश्चित्त की विधि बताई है । प्रबल समूह होने पर जिन्होंने आलोचना नहीं की तब शास्त्र की आज्ञानुसार उन्हें अलग किये, परन्तु पूर्व परिचय के कारण कई संत और कई भावक उनके पक्ष में पड़ गए ।

सं० १६७३ का चालुमांस आचार्यजी महाराज ने बीकानेर में किया । अपार अवर्णनीय, घमोंघोत हुआ । शहर के जैन अजैन मनुष्य तथा देशावर के दरोगाएँ बड़ी संख्या में आने वाले भावक, भाविकाओं की हज़ारों मनुष्य की भीड़ व्याख्यान में इकट्ठी होने लगी था । पूज्य श्री के सदुपदेश द्वारा बरिप्रभु की बाणी का दिव्य प्रकाश जनसमूह के हृदय में व्याप्त अज्ञानान्धकार को दूर करता था । बीकानेर संघ में अपूर्व आनन्द छारहा था । ज्ञान, ध्यान,

तथा नंदलालजी मेहता जैसे फरसाही कार्यकर्ताओं ने महाराजजी के बदर आभय से हिंसा रोकने के लिये प्रशंसनीय प्रयत्न किया है और हिंसा बराबर रुकी रहे और राज्य के हुकम का बराबर अमल होता रहे उसकी पूर्ण निगाह रखते हैं इसलिये वहां कोई भी मनुष्य राज्य की आज्ञा के विरुद्ध जीवहिंसा करने का साहस नहीं कर सका । जो नंदलालजी मेहता उदयपुरवाले यहाँ होते तो राजकी आज्ञा उलंघन कर बकरियों का बध करने वालों को जरूर रुकाने की कोशिश करते, इस बात की खबर उदयपुर नंदलालजी मेहता को मिलते ही तुरन्त वे और केसूलालजी ताफड़िया जौहरी उदयपुर से रवाना हो जयपुर आये और कई दिन ठहर कर बकरियों का बध रोकने का प्रयत्न किया । नानदार महाराज एक खबर पहुंचा कर सम्पूर्ण सफलता प्राप्त की । इस चातुर्मास से बकरी का बिलकुल बध होना बन्द होगया । भीमान् रायबहादुर खवासजी मालावतजी साहिब ने फसाईखाने की तपास करने वाले डाक्टर साहेब को सख्त फरमाया था कि जो कोई शख्स बकरियों का बध करे उनके पास से कानून अनुसार ५०) रुपये दण्ड मात्र ही नहीं लो, परन्तु उन्हें सख्त सजा कराओ । इस कारण खवासजी भी धन्यवाद के पात्र हैं ।

इस चातुर्मास में दर्शनार्थ आनेवाले स्वधर्मी बंधुओं का स्वागत करने का सन्मान सुप्रसिद्ध जौहरी काशीनाथजी वाले

अध्याय ४० वाँ ।

सदुपदेश का प्रभाव ।

रामपुरा से भीजी महाराज कुच्छेरवर पधारे । न्यायदान में स्व
परमती बड़ी संख्या में आते थे । स्कंध तथा प्रतादि बहुत हुए । जहाब-
चन्दजी पोरवाह ने ४५ वर्ष की अवस्था में सजोद ब्रह्मचर्य व्रत बंगी-
कार किया । यहां दो रात ठहर कर पूज्य भी कंजारदा पधारे, यहां जाबद
वाले भाई कजोदीमलजी ने दीक्षा ली, यहां से पूज्य भी भाटखेड़ा
पधारे, यहां भीमूत नानासालजी पीतलिया ने सजोद ब्रह्मचर्य व्रत
बंगीकार किया था तथा यहां के रावजी साहेब ने शिकार खेलने का
स्थान दिया । यहां से भीजी ननासा पधारे । यहां महेश्वरी (बैपुब)
भाई भाबमल्लि चरित न्यायदान का लाभ लेते थे । यहां के न्याया-
धीरा, मुन्सिफ साहिब इत्यादि सरकारी कर्मचारीगण भी न्यायदान का
लाभ उठाते थे । ननासासे महागढ़ हो पूज्य भी पीतलिया पधारे ।
यहां मंदिरमार्गी भाइयों के घर होने से २२ सम्प्रदाय के साधु यहां
नहीं जाते थे तथा उन्हें आहार पानी व चरने वाले मकान भी
नहीं देते थे । भीजी महाराज के सदुपदेश से उनका हृदय परिवर्तित
होगा और यहांके ठाकुर साहिब ने शिकार खेलने का त्याग किया ।

अध्याय ४० वाँ ।

सदुपदेश का प्रभाव ।

रामपुरा से मीजी महाराज कुकड़ेरवर पधारे । न्यायदान में स्व
परमवी बड़ी संख्या में आते थे । स्कंध तथा अतादि बहुत हुए । जहाब-
बन्दजी पोरवाह ने ४५ वर्ष की अवस्था में सजोड़ ब्रह्मचर्य व्रत अंगी-
कार किया । यहां दो रात ठहर कर पूज्य श्री कंजारदा पधारे; वहां आवद
वाले भाई कजोदीमतजी ने दीक्षा ली, वहां से पूज्य श्री भाटकेड़ी
पधारे, वहां श्रीपुत्र नानालालजी पीपलिया ने सजोड़ ब्रह्मचर्य व्रत
अंगीकार किया या वया वहां के रावजी साहेब ने शिफार खेजने का
स्थान किया । वहां से मीजी मनासा पधारे । वहां महेश्वरी (बैप्राव)
भाई भाबभक्ति सहित व्याख्यान का काम लेते थे । वहां के न्याया-
धीरा, मुन्तिरु साहिब इत्यादि सरकारी कर्मचारीगण भी व्याख्यान का
काम करते थे । मनासासे महागढ़ हो पूज्य श्री पीपलिया पधारे ।
वहां मंदिरनागी भाइयों के घर होने से २२ सम्प्रदाय के साधु वहां
नहीं जाते थे वया उन्हें आहार पानी व वस्त्रने वास्ते मकान भी
नहीं देते थे । मीजी महाराज के सदुपदेश से उनकी दृष्टांति रात
होगई और वहांके ठाकुर साहिब ने शिफार खेजने का स्थान किया ।

ही जावद पधारे ; जावद में सेग का उपद्रव था, परन्तु पूज्य भी के पदार्पण करते ही उनके पवित्र चरणकमल से पवित्र हुई भूमि में से सेग भगगया । और शांतिरेषी ने अपना साम्राज्य जमा दिया । जावद निवासियों पर इसका इतना अधिक प्रभाव पड़ा कि जैनधर्मी और अन्यधर्मी पूज्य भी की मुक्त कंठ से प्रशंसा करने लगे ।

रामपुरा से जावद पधारते समय पूज्य भी के सदुपदेश से राह के अनेक ग्रामों में तथा जावद में जो जो उपकार हुए, उनका संक्षिप्त सार निम्नांकित है:—

- १ संस्थान बहेड़ी के ठाकुर साहिब प्रतापसिंहजी बहादुर ने कई प्रकार के शिकार के सौगंध लिये तथा उनकी बड़ी ठकुराइन साहिबा ने आजन्म ब्रह्मचर्य व्रत अंगीकार किया ।
- २ ग्राम मोरवण में जोसवाल ज्ञाति में चीन तड़ें थीं, वे सीमान् के उपदेशानुवृत्त के सौचने से कुसम्प मिट सम्पूर्ण एकता होगई और किवने ही कुव्यसनों का त्याग हुआ ।
- ३ मोही ग्राम के राजपूत लोगों ने जीवाहिंसा तथा मादक द्रव्य पान न करने के त्याग किये ।

अध्याय ४१ वां ।

डाकन की शंका का निवारण ।

निम्नादेहा में बहुतसी शियों के ऊपर डाकन होने का भिरदा बलंक बहुत समय से था । बदेमी लोग उनमें रहते और कोई भी की उनके साथ खानपानादि का व्यवहार नहीं रखती थीं । पूज्य श्रीके निम्नादेहा पधारने पर उक्त बात पूज्य श्री को श्रात हुई और 'बिन्नी प्रकार इन पर से यह बलंक छूटे तो ठीक हो' ऐसा उन्हें जवाब । काम के लोग कहते कि बदाविन् आकाश में से देवता साएन प्रबट हो भूमि पर आ पद बटरे कि ये बाइयां डाकन नहीं हैं वो भी डाकन बा जो बलंक उनके सिरपर है, वह बदापि दूर नहीं हो सकता, । परन्तु परम प्रतापी पूज्य श्री की अपूर्व उपदेशानुव की धारा ने यह बलंक धोखाला ।

व्याख्यान में साधुमार्गी, मंदिरमार्गी, देवद्वार इत्यादि की पुरख बहुत बड़ी संख्या में वसिष्ठ होते थे, तब श्रीजी महाराजने मौका देखकर ऐसा हलन और प्रभावोत्पादक भाषण दिया कि उक्त अदभुत अक्षर तत्काल लोगों पर हुआ और वही दिन से वह शियों ने उन बाइयों के साथ आदरानादि का व्यवहार

भी बाहर जंगल से आगए, उनकी उन बकरी पर दृष्टि पड़ी, इतने में प्रेमा खटोकने कहा कि ये जानवर न मरें तो ठीक हो, यह कहकर प्रेमा दोनों बकरी को ले नोहरे के आगे खड़ा रहा । मावकों को खबर मिलते ही भीयुत नंदलालजी मेहता ने आकर प्रेमा से कहा कि इस राह से बकरे ले जाने की मनाई है, तू क्यों लाया ? सरदार की ओर से बाजार में तथा मशजान और ग्राहकों की बरती भागीयतियों में से किसी भी मनुष्य को बकरे मारने के लिये ले जाना मना है । इस पर से उन दोनों बकरी को छुड़ा फसाई पास से ल गमने के वहां भेज दिये । जो बकरे नगरमेठ के वहां चले जाने हैं उनके बान में कड़ी हाली जाती है ये बकरे मारे नहीं जा सकते । उन बकरी को अपने घर दिये ऐसा वधर मेवाड़ गालबा में चोलते हैं । अमर कोय हुय बकरा की रक्षा का प्रबन्ध राज्य की ओर से होता है । सांगान मेदर टंघर ने इनके जिन जमीन, मकान, मनुष्य और खर्च इत्यादि का पूर्ण प्रबन्ध कर रखा है । महाराणा यादिव इतने अधिक दयालु और प्रजावत्सल हैं कि वे अपने या अपने सम्बन्धी जनों के या राज्य के पार्श्व जिनने बड़े जोहदेशर के लिये कायदे का बराबर जमल हो इसकी पूर्ण विन्या रमते हैं । मेवाड़ के रेजिडेंट साहिब वर्तल बापली के दो भेड़ बरपपुर की धानमही में आगये, उनको भी वहां के मरा जनों ने कायदे हुआ कि हुदा लिये और नगर छेठजी के पास भेज



सब कपड़े रन्दा कर दिया था । अगले आधारे को ने सड़की
 गहराये पर सब कुचन को मगाने और गहरा आदमाद करने
 के लिये हुंसा करेगा देना मगाने दिया जिसका शुभ परिणाम
 यह हुआ कि निम्नोक्ति हुई होकर होइये लोगों के साथ समा-
 धान होना ।

१ सड़की के तनाव में होइये मगाने न गहराये और न गरी ।

२ अगले आधारे और अगलमा के होइये अगलमा न हो ।

३ अगले, अगलमा और अगलमा तथा अगलमा अगलमा
 को होइये अगलमा न हो ।

४ अगलमा में सब अगलमा मगाने के होइये अगलमा न गहराये ।

अगलमा होइये होइये लोगों के साथ लोगों के मगाने अगलमा को
 मगलमा में मगलमा होइये अगलमा में अगलमा होइये में सब मगलमा
 अगलमा अगलमा और मगलमा को होइये अगलमा अगलमा
 अगलमा अगलमा में मगलमा अगलमा होइये । सब मगलमा अगलमा मगलमा
 मगलमा अगलमा अगलमा होइये और मगलमा में अगलमा अगलमा के
 मगलमा होइये ।

गल्प और कादम्बरी आदि के रसिकों में जीवनचरित्र का पूर्ण आकर्षण नहीं होता है, लेकिन तोभी गुणान्वेषी सत्पुरुष तो इन जीवन चरित्रों के आनन्द से स्वागत करते हैं ।

दूसरों का अनुकरण करना यह मनुष्यों का स्वभाव है इस-
लिए प्रणा के सामने अगर आध्यात्मिक और पारमार्थिक जीवन
धिताने वाले महापुरुषों का चरित्र रक्खा जाय तो इससे लाभ ही
हो सकता है, चारित्र नायक के गुण प्रदण करने का जनता को
इच्छा होती है और अपने गुणों के साथ तुलना करके अच्छा
गुण समझ कर पाठक उत्तम होने की कोशिश करने हैं, इस रीति
से जीवनचरित्र इम्लोक से परलोक तक मुख्य के मार्ग दिखाने के
लिए सच्चा शिक्षक का काम देता है। श्री महावीर के जीवन चरित्र
पढ़ने से आत्मिक शक्ति के विकास होकर देहाभिमान कम होता है
और आत्मा का अचल शक्ति सामान होता है। श्रीमन्नन्दजी का
चरित्र आचार्य एक पत्र जन और एक समाचार्य बनाकर दे सकता
है इसके बिना ही तो हम समाचार्य के चरित्र से प्रभावित
हो सकते हैं, समाचार्य के चरित्र के बिना ही समाचार्य
का चरित्र और तब तो समाचार्य के चरित्र से प्रभावित हो

2011年12月11日

[illegible]



लेकिन इसी विरामों वे हमारे प्रयास को देखकर वे भाई साहब ने जसरा संभव हमें दे दिया और हमारे कार्य में सहानुभूति दिखाई, उनकी इस सहृदयता और हृत्पलता प्रगट करते हमें हमें होता है।

इस कार्यमें भाई भी सर्वोत्तम जाइवली कामदार भी हमें सहायता नहीं मिलती तो इस कार्य को सफलता साधवही होती, वे भाई रातों रात परिवार की परवाह नहीं करते हमें दो बड़े सहायता की प्रतीक्षा को बताने में और इन परिस्थितियों को आकर्षक बनाने में जो आत्मयोग दिए हैं उस आत्मयोग से हम उन्हें अपनी सार्वजनिक में भागीदार तरीके काहिर कर इस पुस्तक में उनके नाम जोड़ने में आनन्द मानते हैं।

दूर भी दो परम अनुयायी शतावधानों परिलक्ष महाराज भी स्वयंसेवकी कामों दया और सुनि महाराजों ने पुस्तक को सुशोभित करने में जो भग्न भावों हैं उन सुनिराजों के तथा हमारे सुनने भी श्रीमन्त कीटरीजी भी स्वयंसेवकी साहब और सुनेस्वकी ने उम्मेदी संताइ देकर हमारा प्रयास सफल बनाये हैं उन सभी के भरे पर परम धन्यवाद हैं।

उसमें भी अंग्रेजी के विद्वान् श्रीमन्त मणिनाथजी इतना परम कवि एन. ए. ने इस पुस्तक को अंग्रेजी लिखने को कहाकर पुस्तक को विशेष परिणत बनाई है इस प्रकार का योग्य लेख हमें पान्न हमें होता है।

संख्या आखिरी मानी जाती है लेकिन श्रीलालजी महाराज के लिये परार्थ संख्या अंकमाला की मेरु नहीं थी, किन्तु बीच का ही मणका थी, जिस वक्त आप संसार को आश्चर्यचकित करनेवाला राजस्थान के इतिहास से वीर दृष्टांत का वर्णन करने लगते थे उस वक्त सभा जनो में अद्भुतता छा जाती थी, यति मुनिओं की रासाओं से जिस वक्त काव्य दृष्टान्त कहते थे और घोर अंधेरी रात के मध्य भागमें हथेली के ऊपर से हाथी की सूइ ऊपर पैर रख कर शंकेत के स्थान में जाने वाली अभिसारिका का शाब्दिक चित्र खींचते थे, उस वक्त धोताओं को जितना ही काव्यश्रवण से आनन्द होता था उतना ही व्यभिचार के ऊपर विपाद भी होता था । साधु जीवन की तपश्चर्या-दिखाने वाले वे सनातन धर्म से भिन्न जैन संस्कृति खड़ा करनेवाले और सोने की खान के समान फलमुकी की गहनता भरी ज्ञान गुफा दिखाने वाले ऐसे संसारियों में महात्मा गांधी और संन्यासियों में पूज्य श्री १००८ श्रीलालजी महाराज ही दिव्य पदे । संसारी की अपेक्षा संन्यासी में तप विशेष होना तो एक प्रकार का कुरंग का नियम ही है, जैसा ही देह रंग, वैसा ही इनका यम-सयम रूगी आत्मरंग भी घरे हुए थे, देह और देहों की माल खींचे सिवाय ये दोनों भिन्न नहीं होते, वैराग्य तो नशा के अन्दर रक्त के समान और हृदय की धक्कड़ों और सनुता तो जीवन का आत्म-चट्वास ही समझता था । बहुतों को तो श्रीलालजी महाराज किसी

संख्या आखिरी मानी जाती है लेकिन श्रीलालजी महाराज के लिये परार्थ संख्या भंकमाला की मेरु नहीं थी, किन्तु बीज का ही मण्डल थी, जिस यत्न आप संसार को आश्चर्यचकित करनेवाला राजस्थान के इतिहास से वीर दृष्टांत का वर्णन करने लगते थे उस वक्त सभा जनों में अद्भुतता छा जाती थी, यति मुनिज्यों की रासाज्यों से जिस वक्त काव्य दृष्टान्त कहते थे और पोर अंधेरी रात के मध्य भागमें हवेली के ऊपर से हाथी की सूँढ़ ऊपर पैर रख कर संकेत के स्थान में जाने वाली अभिचारिका का शाब्दिक चित्र खिंचते थे, उस वक्त श्रोताओं को जितना ही काव्यश्रवण से आनन्द होता था वतना ही व्यभिचार के ऊपर विषाद भी होता था । साधु जीवन की तपश्चर्या-दिखाने वाले वे सनातन धर्म से भिन्न जैन संस्कृति खड़ा करनेवाले और सोने की स्थान के समान पतिलुपी की गहनता भरी ज्ञान गुणा दिखाने वाले ऐसे संसारियों में महात्मा गांधी और संन्यासियों में पूज्य भी १००८ श्रीलालजी महाराज ही दिख पड़े । संसारी की अपेक्षा संन्यासी में तप विशेष होता तो एक प्रकार का कुरुरत का नियम ही है, जैसा ही देह रंग, बैसे ही इनका यम-संयम कभी आत्मरंग भी पड़े हुए थे, देह और देही की गाल खींचे सिवाय वे दोनों भिन्न नहीं होते, वैराग्य तो नरों के अन्दर रक्त के समान और हृदय की धक्कधकी और साधुता ही जीवन का आत्मोत्प्लाव ही समझता था । बटुओं को तो श्रीलालजी महाराज बिछी

२० वा	राजस्थान में खादिसा धर्म का प्रकार	२२२
२१ वा	एक मिनि में पांच दीक्षा	२३१
२२ वा	मौराष्ट्र प्रति प्रमाण	२३५
२३ वा	काठियावाड़ के सात सुनिराजों का किया हुआ स्तंगत	२४०
२४ वा	राजकोट का विरत्नरत्नाय चातुर्नाथ	२४५
२५ वा	परोपकार के उपदेश का अजब अंतर	२४६
२६ वा	मौराष्ट्र का सफल प्रयास	२७०
२७ वा	मौरवी का मंगल चातुर्नाथ	२७३
२८ वा	मौरवी में तपश्चर्या महोत्सव	२८२
२९ वा	पारिचय	२८६
३० वा	काठियावाड़ का अभिप्राय	२९८
३१ वा	मैसवी खंडवमा का बकील तरीके	३०६
३२ वा	बिजली विहार	३१४
३३ वा	संप्रदायकी सुस्पष्टवस्था	३२०
३४ वा	अमरशब्दाका विजय	३२६
३५ वा	उदयपुरका अमूर्त उत्साह	३३०
३६ वा	अहेड़ा बंध	३४०
३७ वा	धर्मीय उपकारक विहार	३४४
३८ वा	श्री संपत्ती अरज	३४६
३९ वा	जयपुरका बिजली चातुर्नाथ	३५८
४० वा	महुपदेशका अरार	३६१
४१ वा	डाकरोका बहन दूर	३६२
४२ वा	उदयपुर के महाराज कुमारका आग्रह	३६९
४३ वा	आर्माणी का आकर्षक मंधारा	३७३
४४ वा	राजकोटियों का मर्मंग	३७७

पूज्य प्रभावाष्टकानि

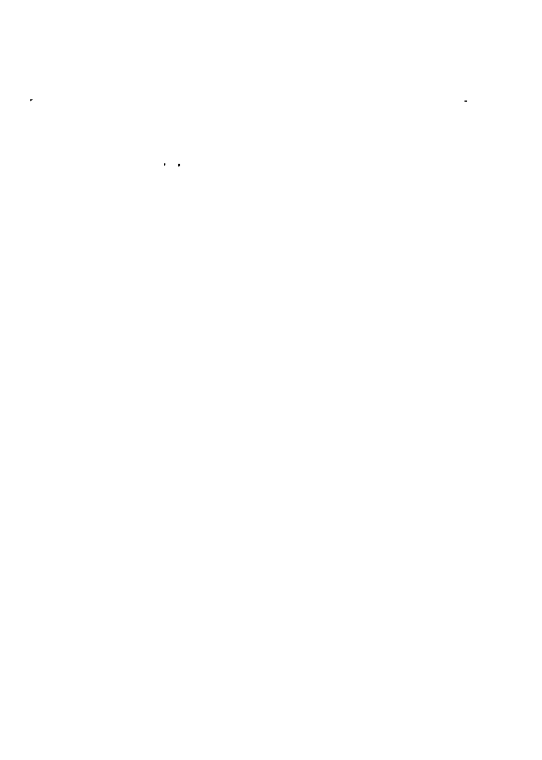
लेखक—शतावधानी पंडित
श्री रत्नचंद्रजी स्वामी ।

नमस्काराष्टकम् ।

वसंततिलकावृत्तम् ।

संगुद्धमंयनधरं नरत्तस्वभावम्
मोक्षार्थमाधनधरं प्रदिवप्रभावम् ।
नवप्रचारपरिणामितदुःखदायम्
भीष्मातुष्टिद्वयधरं नित्यं नमामि !

प्रार्थना—नमस्कारं कृति से कुछ संनम के लिये है, नमस्कार से ही कायका करण, मोक्ष करी व कुछ दुःखार्थ कायार्थ न करण निरुद्धा, हेतु हेतुकार्यों से विन्दुन करण नमस्कार से, नमस्कार से ही प्रचार करण करण ही ही से दुःख व दुःखार्थ के लिये





आर्याओं के सङ्घात से उनमें धार्मिक-ज्ञान में वृद्धि की । उनके-
 व्रत प्रत्याख्यान चारों स्कन्ध उनकी जिन्दगी के अन्तिम कई
 रनों तक रहे । साधु साध्वियों के प्रति उनका अनुपम पूज्य भाव था ।
 यदि आहार-पानी बहराने के समय कदापि कुछ अस्वच्छता हो-
 जाता तो वे उस दिन आहार न करते थे। सारांश इन सती साध्वी-
 स्त्री का चरित्र अतिशय स्तुतिपात्र था, स्तुतिपात्र ही नहीं परन्तु
 भक्तिपात्र भी था ।

इन निर्मलहृदय रत्नप्रसूता स्त्री के उदर से मांगावाई नामक
 एक पुत्री और माधूलाजी नामक एक पुत्र का प्रसव होने के पश्चात्
 विक्रम सं० १६२६ के आषाढ मास वद्य १२ को एक पुत्र का
 जन्म हुआ । जगन् में पुत्र जन्म का असीम आनन्द तो कई
 माताओं को प्राप्त होता है परन्तु वही माता आनन्द सफल सम-
 न्ती है कि जिसका पुत्र उसके दूध को दिपाता है और कुल को
 प्रकाशित करता है ।

भान्ति चांदकुंवर वाई ने * शुभ स्थान सूचित एक ऐसे पुत्र का
 प्रसव किया कि जो पवित्रात्मा, धर्मात्मा, महात्मा और वीरत्मा के

* भीलातजी को माता के गर्भ में उत्पन्न हुए तीन बच्चे
 नहीं थे कि एक समय माता स हिंसा चांदनी में सोई थी ।

श्रीलालजी बालक थे तब उनकी माता उन्हें साथ लेकर यानक में श्रीमोताजी तथा गैदाजी नामक विदुषों और विशुद्ध ब्रिटिश बालों सतियों के पास शास्त्राध्ययन करने के लिये निरन्तर जाया करती थीं । उनके पवित्र संवाद का पवित्र अंतर उनके हृदय पर बाल्यावस्था से ही गिरने लग गया था । उस समय टोंक में पूज्य श्री तुलसचन्द्रजी महाराज की सम्प्रदाय के सुसाधु तपस्वीजी श्रीपन्नालालजी (पूज्य श्रीचौधमलजी के गुरु भाई) तथा गंभीर-मलजी महाराज विराजते थे । अपने पिता के साथ उनके पास भी जाने का अवसर श्रीलालजी को कभी २ मिलता था । पन्नालालजी महाराज भेद आत्मार्या, सुपात्र, समय के ज्ञाता और विद्वान् साधु थे । एक से लगाकर ६१ वर्षों तक के योग उन्होंने किये थे । इन दोनों साधुओं का सत्समागम श्री श्रीलालजी के जीवन को सावर्ण्यमिश्र करने में महान् आधार भूत हुआ ।

बाल्यावस्था से ही साधु और आर्याजी की ओर स्वप्रतिष्ठित प्रेमभाव और अनुपम भक्तिभाव था । जब ये पांच वर्ष के थे तब और बालकों की रमणत की तरह श्रीलालजी भी ऐसी रमणत करते थे कि कपड़े की थोड़ी कलह, मिट्टी की दुर्लक्षियों के पात्र बनते, गुरु पर दण्ड बांधते, हाथ में शस्त्र के बदले बागल लेते और महान् दान बाँधते ऐसा राज्य दिखाते थे । इस विधि में उन्हें देव-

प्रदर्शन इन महापुरुष के जीवनचरित्र में स्थान स्थान पर दृश्यमान हैं ।

श्रीलालजी का स्वभाव बहुतही कोमल और प्रेम पूर्ण होने से उनके बालमोहियों की संख्या भी अधिक थी । उनके साथ इनका बर्ताव बड़ाही उदार था । श्रीलालजी के उत्तम गुणोंका कारण मित्रमन्दिर पर जादूमा अमर करती थी वज्रराजजी और गुजरमलजी योगवास से दाने उनके खास मित्र थे । श्रीलालजी के घरामें इन दोनों मित्रों के हृदय पट पर गहरी छाप लगी थी और इसीसे उन्होंने ही उनके साथ समार परित्याग कर आत्मोन्नति साधन करने का हट मकल्प किया था । परन्तु पीछे से वज्रराजजी का आग्रह मित्रोंमें वसी तरह समझों की प्रतिक्रिया होने से दीक्षा न ले सके और गुजरमलजी ने श्रीलालजी के साथ ही दीक्षा ली । श्रीलालजी के प्रति इनका अत्यन्त पूज्यभाव था ।

उन के श्रीलालजी के महाभारत उन्हें इतना पारंगत है कि जब वे मृत्यु होइकर चलन हुए तब आँखों में अक्षु लाकर मदन करने लगे थे । उनके मित्र उनका वियोग मदन नहीं कर सके थे । उनकी सार्धानता, कर्तव्यपरायणता, और प्रेम मय स्वभाव ने उनके मित्रों का हृदय इतनीभूत होता था । परन्तु उन्हें विशेषतः यशोभूत करने वाला कारण उनका समागुण था । श्रीलालजीका हृदय इतना

अधिक कोमल था कि वे किसीका दिल दुखै ऐसा एक शब्द भी कहते डरते थे और कचिन् उनके कोई शब्द या किसी प्रवृत्ति से दूसरों का दिल दुख गया ऐसा भाव होते ही वत्काल जाकर उनसे क्षमा प्रार्थी होते थे, वे श्लाघ्य सद्गुण उनकी वीर माता की तरफ से उन्हें प्राप्त हुए थे । भीलालजी की ऐसी बदार प्रवृत्ति से उनका किसीके साथ वैर भाव न था. शत्रुता थी तो सिर्फ मनुष्य के शरीरमें मित्रकी तरह रहते हुए शत्रुता फान करने वाले आज्ञस्य स्वरूप शत्रु से थी—भीलालजी का क्षमागुण उनकी महत्ता बढ़ाता था. इतनाही नहीं किन्तु ऊपर कहे अनुसार वशीकरण मंत्रकी आवश्यकता भी पूरता था। इस उत्तम गुण द्वारा वे परिचित व्यक्तियों पर विजय प्राप्त कर सकते थे । (क्षमावशीकृते लोके, क्षमया किं न-सिध्यति !) अर्थात् यह संसार क्षमा द्वारा वशी है अतः क्षमा द्वारा कश सिद्ध नहीं हो सकता ? अर्थात् सब मनःछामना सिद्ध होती है ।

सं. १८३२ के भाद्र शुक्ल ५ के रोज जयपुर अंतर्गत ^{दुर्ग} नामक ग्राम निवासी बालावज्जो नाम के सुभाषक की पुरी में कुंवर बाई के साथ भीलालजी का सम्बन्ध किया गया। उस मन भीलालजी की उन ६ वर्ष की और नामकुंवर बाई के उन ८ वर्ष की थी ।

जन्म के शुभ संस्कारों के प्रभाव से बालवय में ही वैराग्य के बीज अंकुरित हुए थे और जिन वार्षारूपी अमृत-जल का बार-बार घाँस होने से अब वह वैराग्य वृत्त विशेष पल्लवित हो बढ़ गया और उसका मूल भी गहरा पैठ गया था जो भी अनिच्छा से बड़ों की आज्ञा चुप रह कर शिरोधार्य करते रहे । उनकी यह प्रवृत्ति शायद पाठकों को अरुचि कर होगी और यही प्रश्न मन में उठेगा कि क्या न करना ही क्या बुरा या ? परन्तु कर्म के अचल-कायदे के आगे सबको मिरा मुकदमा पड़ता है और प्राकृतिक संयोजकियों सर्वदा हेतुवृत्त ही जाती है । श्रीमती मानकुंवर बाई के श्रेयस् का मार्ग भी इसी प्रकार प्रसन्न होना बिना ने निर्माण किया होगा । श्रीमती को श्रीमती चानकुंवर बाई जैसी सुशिक्षिता मास के पाम में उत्तम उपदेश (शिक्षा) सम्पादन करने का सुयोग प्राप्त हुआ और पवित्र जीवन व्यतीत कर दी गिता हो छः वर्ष तक संयम पाल पति में पढ़ने स्वयं म पत्ररत का म भाग्य प्राप्त हुआ, यह भी इसी प्रवृत्ति से परिणाम हुआ होगा अनुमान करना अनुचित है ऐसा कोई कह सकेगा ? हाँ ! अतिजल्दी का हृदय उम्र समय रग से रगा हुआ था और ज्ञानान्यास से उन्हे अपरिमित विषामा ही यह बात निर्विवाद है परन्तु जीला देने का दृढ़ निश्चय इस समय या या नहीं यह निश्चयामक रीति में नहीं कह सकते ।



को भोग दो हुई तड़फती महलियां कदाचित् उनके दृष्टिगत होतीं
 एवं इन्द्रियों के वश न करने वाले विचारों को पुष्टि मिलती थी ।

सूर्यास्त पहिले पहुंचने की तेज़ी में नीचे उतरते सामने ही
 झूल झड़ दिखते, फैला हुआ पराग मगध को सर करता, परन्तु
 दूटे हुए अंकुर, खिली हुई कलियां, फूले हुए फूल और नीचे गिरे
 हुए, मिट्टी में मिले कुम्हलाये हुए पुष्प जीवन की बाल, युवा,
 प्रौढ़ा और बुद्धावस्था तथा जीवन मृत्यु का प्रत्यक्ष चित्र खड़ा करते
 और शीतल प्रकृति की समस्त कलाएं देखते, पास के पत्थर पर बैठ
 जाते थे । प्रत्येक पत्थर, प्रत्येक पान और भूविहारी प्रत्येक पक्षी,
 मानो स्वार्थमय और परिवर्तनशील संसार का नाटक करते हों ऐसा
 मानलूम होता था । समीप में बहते हुए झरने को मानो जीभ आई
 हो उस तरह पत्थर के साथ का विवाद इस नाटक में संगीत का
 कार्यकर्त्ता था " जैसी दृष्टि वैसी सृष्टि " इस नैसर्गिक नियमानुसार
 ये सब दृश्य और सब घटनाएं शीतल को वैराग्य की ही शिक्षा
 देती थी ।

प्रकृति की रचनाओं ने मस्तिष्क के परमाणुओं पर इतनी
 प्रबल सत्ता जमा ली थी कि राह में भी वे ही विचार स्फुरित
 होते रहते थे ।

माता और भ्राता इत्यादि कुटुम्बी जनों को इस समय सिर्फ एक ही विचार आभासन होता था । वे ऐसा मानते थे कि, इनकी बहु के यहां आने पर इनके विचारों में परिवर्तन हो जायगा । इसी आशा में वे यौही दिन बिताने लगे ।

आशा यही रागवारा में फंसे हुए प्राणियों की प्राणदायिनी युक्त है । यह पशुपति के मानसिक प्रदेश में प्रविष्ट हो भविष्य के जिये नई र रम्य इमारतें चुनती है और आश्रितों को आशासन देती रहती है ।

सं० १६३६ में श्रीजी की धर्मपत्नी मानद्वारा ४३ को दुर्गा में गेना ल टांक ले आये, उस समय वनकी उम्र १२ १३ वर्ष की थी । पुत्रवृत्ति के आगमन में साम का हृदय अत्यन्त में प्रसन्न गया और उन्हें वनच विनयादि गुण और योग्यता समझता था अपने आशा मफल होने के संबंध में मग्न हुआ । यही कारण कि प्राणी निज नों उसका परीक्षा करना चाहते थे कि, वह कौन से वनच के रंग जैसा शक्तिशाली है या मज्जित के रंग जैसा है । इस परीक्षा का क्या परिणाम होता है तथा श्रीजी के कुटुम्बी वनच को आशा दितने अंश तक मज्जित होता है यह अब दर्शना है ।

ने कई वनच-पुत्र जव में रक्षक की छाती पुनिषा म

हजार लिये ये इनमें से गोधे के बचनानृत का स्मरण वे दारुणार
केपा करते थे ।

प्रियास्नेहो यस्मिन्निगदतदृशो यानिकभयो

यमः स्वीयो वर्गो घनमभिनवं बन्धनामिव ।

तदाऽमेध्यापूर्णं व्यसनवित्तसंतर्गविषमं

भवः कारागेहं तदिह न रतिः क्वापि विदुषाम् ॥ —

भावार्थ—संसार में स्त्रियों का स्नेह छुंखला के बंधन जैसा
तथा भटकते हुए गोधे जैसा है । अपना कुटुम्बी वर्ग यमराज के
समान, तदनी नई जात की बेड़ी के समान है और संसार अप-
वित्र वस्तुओं से लान दुःखदर्श दीनों के संतर्ग जैसा भयंकर है ।
यों संसार यह सबसुख कारामह ही है और इसीलिये विद्वान् मनुष्यों
की प्रीति इसके किसी स्थल पर भी नहीं नजर आती ।



ऐसा मधुर संगीत ! कलाव जातापने लगे । सूर्य नारायण जी किरणें
 बटवकों की भेद भीजी के मरुतक पर विजय राज, पहिराती हों
 ऐसा भाव होने लगा, सृष्टि देवी ने भीजी के साथ महानुभूति
 दिशने के लिये हो यह करवस्था क्यों न रही हो ?

कहा ! कैसा नांगतिक राध ! कैसा अपूर्व व्रत ! कैसी दिव्य
 भावना ! कैसा विरुद्ध जीवन ! यत यत मैं ऐसे ही पावेय जीवन
 दिखलेंगा, यही कल्याणप्रद मार्ग पहाए रहेंगा और जन समाज
 को भी इसी मार्ग पर लीचुना जितके लिये मेरा हृदय चिन्तक
 रहता है वमसे लिये भी यही निर्मल और कल्याणकारी मार्ग
 गोहंता । अनेक प्रहस्य, यही मेरे जीवन की अभिलाषा हो ।
 श्रेष्ठतमिष्ठ सुखों की अब मुझे कनिक भी इच्छा नहीं, इष्टि
 विनाश का विचार भी अब मुझे बिप सम दुखदर्श नाश्वर
 होता है, मैं कर लियों का दमन हर जाइलगा, संयम
 केनिकार रहेंगा मजबूतियों का मुक्त बर्तन रहेंगा, प्रभु का ध्यान
 धर्मों का धर्म के आकाश मुक्त करनी कानना में बकटाऊगा प्रहस्य
 की लज्जागर्ह को विमल रहलगा, को मैं करके कह मैं धारण रहलगा
 और यतन में प्रहस्य का दिव्य प्रकाश फैलाऊगा विदय पावन
 की पथक का प्रहस्य की लोह राखना में मैं करके गरिह करनी
 इष्टि और सम हो विमल नहीं होने दुसा मार्ग के सारकार्य देह

मानकुंवर बाई पति के पास आ खड़ी हुई और नम्र भावयुक्त दीन वाली से, हाथ पकड़कर लाई हुई जवला की ओर अभिहित से देखने की प्रार्थना करने लगी । परन्तु काम को किन्पाक फल समझने वाले और प्राण की आहुति देकर भी शिथिल मृत के सरक्षण की प्रतिज्ञा लेने वाले दृष्टव्रतधारी महानुभाव सीलालजी ने नीचे नयन रख मौनभारण कर लिया । युवती के सौजन्य, सौंदर्य, वाक्पटुता और हावभाव उनके हृदय पर एकान्त होते भी कुछ असर पैदा न कर सके । एकान्त में स्त्री के साथ रहना, वार्तालाप करना, उसके करण वचन सुनना, उसके हावभाव या अंगोपांग देखना प्रभृति मन्त्रधारियों के लिये अन्निष्टकर और अकल्पनीय हैं ऐसा सोचकर भीजी ने खरा से निकल भागने का निश्चय किया और उठ खड़े हुए । परन्तु नीचे उतरने की पथर की सीढ़ियों का राह रोककर मानकुंवर बाई खड़ी थी, इसलिये भीजी सीढ़ी के दूसरी ओर चांदनी के दूसरे खंड में जल्द २ जाने लगे ।

हृदय का भार कम करने के लिये प्रथम अवसर में लाभ उठाने और उन्हें भग्न न करने देने का निश्चय कर युवती उनके पीछे २ कोमल पांव से चली और छोटी का हाथ पकड़ने के लिये अपना कोमल करपल्लव बढ़ाया । अपना वही हाथ जो पिता ने पति को दफनाने के समय हाथ में सीसा था । वही हाथ पति की स्तिर से परचने का निमेष करने पर जवला की ओर जलकर ही रह ।

जहा विराला वसहस्स मूले न मूसगाणं वसही पसत्था ।
 एमेव इत्थीनिलयस्स मज्जे न वंमयारिस्स खमो नियासो ॥

अर्थ—जहां बिज्जी रहता हो वहां चूहे का रहना ठीक नहीं
 इसी तरह जहां स्त्री का निवास हो वहां मच्छपारी का रहना खम-
 कारी नहीं ।

श्री दशैव कालिक सूत्र में कहा है कि :—

हन्धपायपडिच्छिन्न कन्धं नासं विकप्पियं ।

अविवाससयं नारिं वमयारी विवज्जण ॥

अर्थ—जिमके हाथ पाव छिन्न भिन्न हैं कान और नाक भी
 कटे हैं और मौ बपे की बुढ़िया है ऐसी स्त्री का भी मच्छपारी का
 निवास न करना चाहिये ।

जहा कुक्कुटपायम्म निचं कुललओ मयं ।

एव गुरु वंमयारिम्म, इन्धिदिग्गहो मयं ॥

अर्थ—जैसे कुक्कुट के चूबे को हमेशा बिज्जी का भय रहता
 है वैसे ही मच्छपारी को स्त्री की दंड से भय उत्पन्न होता है ।

श्री वीर प्रभु ने पवित्र जिनागम में मच्छपार्य की भूरी २
 प्रशंसा की है और मच्छपार्य के भग करने की अपेक्षा करना महा

देना साधुओं को सम्बोधन दे रहा है । शीर्षों भी गृहस्थ के वेष में साधु हो थे ।

कामान्ध और विषयबुद्धि मनुष्यों को यह वृत्तान्त पढ़कर मोचता पाहिऐ, पश्चात्ताप करना पाहिऐ और अपनी आत्मा के हितार्थ इन महात्म की सत्प्रशंसा का अनुकरण कर साफल्य जीवन करना पाहिऐ ! विषयों के गुलाम न बन मन इन्द्रियो पर विजय प्राप्त करना सीखना पाहिऐ और ऐसा करने के लिये अनेक प्रकार के नियम निश्चय आदर कर जीव की जीवित में भी वे पालने पाहिऐ ।

अनादिकाल के अभ्यास ने मन और इन्द्रिय स्वभाव से ही शरत् वशादि विषयों की ओर खिंचावर वैषयिक सुखों में ही तर्पणा हीन रहती है और यही कारण है कि आत्मा की अनन्त शक्ति का भान नहीं रहता । मन बन्दर की तरह अति चंचल है । बन्दर जैसे हवा पर कूदता फिरता है वैसे ही मनुष्य का मन भी नानाप्रकार के विषयों में बेग में दौड़ता रहता है । नव लेखों के एव और परमानन्द की प्राप्ति के लिये मन की ऐसी व्यवस्था और लेखार्थ स्वभाव के खण्ड करने का यत्न उत्कृष्ट है । बौद्ध एक महाभाग दिवले पुरुष ही ऐसा कर सकते हैं । भिक्षुओं ने कालव्य से ही वैषयिक सुखों को दूर दूर करन में अदभुत परा-

वैराग्य का वेग ।

उपर्युक्त घटना के घटने के थोड़े दिन पश्चात् भीजी ने अपनी माता के पास से विनयपूर्वक दीक्षा के लिये शानुमति मांगी । माजी के कोमल हृदय पर ये शब्द बसाघात जैसे प्रहारी हुए तो भी इनने धैर्य धारण किया कारण ऐसे ही मतलब वाले शब्द वे आज से पहिले कई समय पुत्र के मुख से सुन चुकी थीं इस समय उनसे इतना ही उत्तर दिया कि “ संसार में रहकर भी धर्म, ध्यान क्या नहीं हो सकता ? हमारी दया न जाती हो तो कुछ नहीं परन्तु इस विचारी के ऊपर तो तुम्हें कुछ दया लानी चाहिये । इसका जन्म बिगाड़कर जाना यह महा अन्याय है । फिर भी अगर तुम्हें दीक्षा लेना है तो मेरा वचन मानकर थोड़े वर्ष संसार में बिता । ” इतना कहते २ उनका हृदय भर गया और आंख में से आंसू गिरने लगे । भीजी ने अपना दृढ़ निश्चय दिखाते हुए कहा कि “ माजी ! आप कोटि उपाय करो तो भी मैं अब संसार में रहने वाला नहीं हूँ । मुझे अब आज्ञा देओ तो संयम आराधन कर अपनी आत्मा का कल्याण करूँ । आयुष्य का क्षण भर का भी विश्वास नहीं है । ”

भाजी के पढ़ने से-इस बात की खबर नाथूलालजी को और फिर सेठ हीरालालजी को हुई । सेठ हीरालालजी ने भीलालजी को बुलाकर कहा कि, खबरदार ! दीनों का किसी दिन नाम भी लिया है तो ! आज से तूने साधु के पास भी किसी दिन नहीं जाना । साधु तो निठले बैठे २ लट्ठों को चढ़ा मारते हैं । ” इन शब्दों से श्रीलालजी के हृदय में बहुत दुःख हुआ । उन्होंने बोलने का प्रयत्न तो किया, परन्तु कुछ बोल न सके । अपने पिता के बड़े भाई हीरालालजी की आज्ञा का उनने कभी झगपन नहीं किया था तो उनके सामने बोलना भी उन्हें दुःसाध्य था । सेठ हीरालालजी ने नाथूलालजी से भी कहा कि “ इसकी बहुत संभाल रखना और साधु के पास इसे बिल्कुल मत जाने देना ” ।

हीरालालजी सेठ की सख्त मनगई होने पर भी भीलालजी गुमरीति में अपने गुरु के पास जाने लगे । सद्गुरु का वियोग वे न सह सके । सरसंग में कोई अनोखी आकर्षण शक्ति रहती है । श्रीजी की उत्तम ज्ञानाभिलाषा और सरसंग के आकर्षण के समीप सेठ हीरालालजी की ओर का भय कुछ गिनती में न था ।

एक दिन भीजी ने परमप्रतापी पूज्य भी उदयसागरजी ॐ

ॐ इन महापुरुष का जीवन-चरित्र गुवांशरी में दिया है ।

मल्लवी बन्धूचन्दजी तथा मगनलालजी महाराज विराजते थे उनके दरान बिचे मुनि श्री मगनलालजी महाराज कि जो विद्वान भावार्थ श्री जगदीशलालजी महाराज के गुरु थे उनको सम्मान करने की अनुमति और अति आदर्शकारी की देख मल्लवी लालदाश्वर्च हुर और इनकी सेवा में थोड़े दिन रहना मिले तो कैसा अच्छा हो ? ऐसा सोचने लगे, परन्तु भाई की इच्छा के कारण वे दूसरे दिन जाकर आये। वहाँ भी ठेकठिहजी महाराज पण्डित मुनिराज विराजते थे, उनके दरान बिचे और चिर दोनों भाई ठोक आये। नापूलातजी का अपने छोटे भाई (भौजी) पर बहुत प्रेम था। उन्हें हरदह लुट रहता ऐसी उनकी सख्त इच्छा थी। इसीलिए राह में भीजी की मर्जी सम्मान करने के लिये वे उनकी मर्माद पुरषों के दरान तथा उनकी बारी कबल करने करने आये थे। वन समय नापूलातजी की और २० भौजी की १५ वन की दम थी।

ठोक आये पण्डित भौजी कारण की इच्छा में कहेते रहते और पठन पाठन तथा धर्मगुहान से जवन सार्थक करते थे। उन्हें संसार कारणर समझ था। दीक्षा ले आनन्द साधने की उनकी प्रवृत्ति

वे सम्मान करने की ऐसी ही ऐसी मर्जी महाराज की भी प्रेम हो गई थी और वह प्रकाश बनलालजी महाराज की ओर से ही मिली हुई है ऐसा वे कहा करते थे।

न कटा थी । हमके विरुद्ध उनके कुटुम्बीजनों की इच्छा किमी भी
नरुट किमी भी युक्ति प्रयुक्ति से या अन्तमें बलात्कारसे भी संसारमें रगने
की थी । जैनशास्त्र का ऐसा कायदा है कि जबतक बड़ों की आज्ञा
न मिले तबतक दीक्षित न हो सके । भीजी ने बहुत से प्रयत्न
किये, परन्तु आज्ञा नहीं मिली । हमसे भीजी को बहुत दुःख
हुआ और ऐसा निश्चय किया कि अब तो किसी दूर देश में जाकर
सन्त महन्त की सेवा कर जैन मंत्रों का अभ्यास कर आनन्दित
साधना करेगा ।

ऐसा विचार कर कुछ समय व गुजरात पर से निकले और
अनूपुर आरक्ष ग बैठ गुजरात काटनाकाह की ओर चले गए और
वहां कोई गांव मंदिराओं में एक समय रुका । भीजी का दिनचर्या,
आनन्द के लिये अब रुकना पड़ा । काटनाकाह में एक प्रभु
की लकड़हारी का नाम था । वह लकड़हारी में आये और
वहां से मुक्त हो चले । वह लकड़हारी ने भी भीजी
का हृदय लब्ध की । वह लकड़हारी ने भी भीजी को बहुत
से मुक्त हो चले । वह लकड़हारी ने भी भीजी को बहुत
से मुक्त हो चले । वह लकड़हारी ने भी भीजी को बहुत

भीजी ने एक लकड़हारी से एक लकड़हारी से एक लकड़हारी से
होना दिखी लकड़हारी से भी लकड़हारी से एक लकड़हारी से ।

इसलिये इनके प्रवास समय में इनके कुटुम्बीजनों ने ऐसी पिन्ता-
मत्त स्थिति में अपने दिन निर्गमन किये. यह आगे देखिये ।

भाजी टोक से रवाना हुए उसके दूसरे ही दिन इनके भाई
नाथूलालजी उनकी तलाश में निकले और जयपुर स्टेशन आये
परन्तु जब किधर जाऊँ यह राह उन्हें नहीं सूझी : बहुत सोच
विचार के पश्चात् उन्होंने निश्चय किया कि जहाँ २ विद्वान्
सुनिराज धिराजवे होंगे वहाँ जाकर तपास करना चाहिए । ऐसा
सोच वे अजमेर, गयेशपुर, रतलाम बीकानेर, नागौर, जोधपुर,
दिल्ली, आगरा आदि २ बड़े शहरों में घूमे, परन्तु किसी भी स्थान
पर भाई का पता न मिला हुआ । फिर निराश हो घर आये । भाजी
प्रभृति को भी श्रीलालजी का पता न मिलने के समाचारों से बड़ा
दुख हुआ नाथूलालजी ने रोज चारों ओर पत्र लिखना प्रारंभ
किये यों दो एक महीने बीते पश्चात् एक समय भाजी ने सज्जन
नयनों से नाथूलालजी को कहा ।

भाजी का कहीं पता न लगा ऐसा वह कह नें हुआ
पर नें बैठा रहता है यह ठीक नहीं यह सुनकर नाथूलालजी का
हृदय भर आया । मनु भाजी और उनकी प्रभृति दूर न भूँ
उनका दिल किसी भी तरह से न हुआना यह उन्हें बड़ा दुःख
था इसलिये मातु की के ये शब्द फलेपट्ट पर लिखे हुं हैं

झुंडने निकले दूसरे ही दिन खाना होकर कई राह्र ओर मामों में होते हुए नागौर आये । नागौर में उन्हें एक चिट्ठी मिली कि जो टोंक से भेठ हीरालालजी के पुत्र लक्ष्मीचंदजी की लिखी हुई थी । उसमें लिखा था कि नाथद्वारा में मुनि भी चौधमलजी महाराज विराजते हैं वहा श्रीजी है । इसलिये तुम वहां से नाथद्वारा जाओ । इस पत्र के पाते ही नाथलालजी नाथद्वारा की ओर खाना हुए । राह में कपासन मुकाम पर पं० मुनि भी चौधमलजी महाराज के दर्शन हुए और कपासन में तपास करने से मालूम हुआ कि टोंक से लक्ष्मीचंदजी नाथद्वारा आये थे और भीमलालजी को बुला ले गए हैं । यह खबर सुनकर नाथलालजी भी वहां से सीधे टोंक आये ।

उस समय भी भोजी बाहर की इवेसी में अकेले रहने थे और वे कहीं भग्न न आय, इसलिये उनके पास ग्यास मनुष्य रहने गए थे । उनके लिये भोजन भी वहीं पहुंचाया जाता था । छाति की रसोई में भोजन करने जाना उनसे हमेशा के लिये बन्द कर दिया था । एक साधारण कैदी की तरह उनकी स्थिति थी ।

जब २ अक्सर मिलता तब २ के अपनी मातुश्री और भाई को दीक्षा की आज्ञा देने के लिये प्रार्थना करते थे । आपस में कई समय अधिक समय सुसम्वाद भी होता था । भोजी की मान्यता

किराने के लिये चाहे जैसी सघोट मुक्तियां भिदाई जातीं दो भी उनका प्रत्युत्तर भीजा बहुत उत्तम रीति से देते थे। मोह की उप-शान्तता और सकृष्ट वैराग्य आत्मा में स्थित प्रज्ञापना प्रकटाता है। निर्मोही पुरुषों के सामने प्रकृति हमेशा नानावस्था में ही खड़ी रहती है। सत्य उन्हें कहीं दूँदने नहीं जाना पड़ता। वे स्वतः ही सत्य की साक्षान् मूर्ति रहते हैं। भीजी महाराज ने मोह-रिपु को कई अंश से पराजित किया था, इसलिये उनकी भवि अति निर्मल हो गई थी और यही कारण था कि, भीजी के उपदेशात्मक और नाभिक शब्द प्रहारों से भाजी के मन पर गहन असर होता था; परन्तु सेठ हीरालालजी की इच्छा के प्रतिकूल वे निश्चयात्मक रीति से कुछ भी कहने की हिम्मत न कर सकती थीं।



अध्याय ५ वां.

विन्न पर विन्न ।

देवी संवत्सरी हास्य में दो एक वर्षे व्यतीत होगए । श्रीज्ञानजी की उमर १७ वर्ष की हुई । आशा के लिये उनके सकल प्रयत्न सिफल गए और दिन पर दिन अधिक चस्की होने लगी । साधु गुणिगणों के वरान, शास्त्र भवण और पठन पाठन में कतंक कुटुम्बी जगों की ओर में होते हुए विघ्न वनों अविशय असह्य होगए । विन्न अपराध कैद में हास्य स्वभा यह यहाँ का अन्याय कर वन्दे दिना ताह सहन न हो सका । अपनी स्वतंत्रता अपहरण होते दल सीमा के दिश में अधिक चोट लगी । सत्य कहा है कि "सुमुत्तु भाग्य की वशानि के लिये बाहर निष्ठाने के प्रथम अपनी अन्तः दृशा को वसत बनाना चाहिये" ।

एक दिन सुबह शौचकर्म से निवृत्त होने के मिस वे ऊपरी मंजिल से सीधे आये । कम समय भरत ठड पड़ रही थी । तो भी बुझ कपड़े लसे न लिये फकत एक चादर हास ली और इसी हावत में वे टोंक लगा खाना हुए । एक दिन में २२ कोस की कठिन मंजिल पार कर शाङ्पुरा के समीप देठा मान पहुँचे । भूख यहाँ

तू चतुर है इसीसे समझ ले । और मेरी दया जाती हो तो मेरी आंखों के सामने रहकर चाहे जितना धर्म ध्यान कर । तुझे मैं कमाने को नहीं कहती । प्रभु की दया है और भाई जैसा भाई है तुझे कुछ दुःख नहीं देगा ।

श्रीजी—माजी ! आगे पाँचें मुझे यह पर छोड़ना पड़ेगा ही और लम्बे पाँच पसार कर परबरा दूमरों के कन्धों पर चढ़ इस हवेली से निकलना ही पड़ेगा ही । तो अभी ही खड़े पाँच से स्वयमेव मुझे इस बंदीखाने में से छूटने दो और सिंह की तरह स्वतंत्र विचरने दो तो क्या सुरा है ? ।

श्री मृगापुत्र ने अपनी माता से कहा है कि:—

जहा किपागफलायं परिणामो न सुंदरो ।
एवं भुक्ताय भोगाणं परिणामो न सुंदरो ॥

श्री उत्तराध्ययन सूत्र, १६ अ० ।

किपाक वृत्त के फल देखने में बड़े सुन्दर हैं परंतु परिणाम भयंकर है वही तरह संसार के सुख भोग भोगते मिष्ट हैं परंतु परिणाम भयंकर दुर्गति में लेजाने वाला है । श्री कीर्तिधर मुनि ने भी अपने संसार पक्ष के पुत्र सुकोशकुमार को कुटुम्ब और

“ सत्यमेव जयते ॥ सत्यं जयन्तु सर्वे देवताः ॥ ”

“ सत्यमेव जयति तस्य परितोषः ॥
मेधाश्च मानसश्च प्रवर्धन्ति देवताः ।
साधु परितोषति भिक्षुः प्रदादिनात्मना
सौकान्त्याप्यदिनमायसीति श्रितम् ॥ ”

जब आपने और मेरा साधुको के सदा प्रशंस करते हैं। ईश्वर-च
मनुष्य सदा सत्य से पड़े रहते हैं, परितोष सदा होता है कि, शिष्ट को
पड़े के जन्म की तरह सदा पुनरावृत्ति कर होता जाता है और सत्य-प्राप्त से
ही सदा जाता है ।

मम ! सत्य मानिये कि, मेरा योग्य भेट, लाभ या साधु के
सोना जैसा नहीं है। परन्तु सही के सोना जैसा है। इसमें भी अग्नि
में वह अविनाशित परितोष होता है। इसमें जो अविनाशित प्राप्त
होगे वे हैं सत्य से सदा परितोष सदा सदा सत्यमेव । ऐसा वह
भी नहीं चले गए ।

इस साधु ने साधु और भाई के मन पर विजयी जितना अस-
ह्यता उनके परितोष में उन्हें उदाहरण करने की परबतों भिन्न
और किसी प्रकार का परितोष न देना देना निश्चय किया

एक समय साधुजी ने शिष्यों से कहा था कि :-

“ लक्ष्मी लगी आ बाम, ऐसी राज्य मादी ने लगी
मोर येही पितृक धरे, मागी गया की मरुत जी ?

अब तो दिन गिनती में हैं। अपने भगवानका यही
आदेश है कि, जग माय भी समाप्त मत करो। कारण कि:—

हुँदिव सर्व अगदित ह्ये, नन साव निर्गोणी अने वनपुमं ।
बुद्धि निवार, विवेक, मद्रासक, पापन, अन्य न कोई अपुमं ।
बहु अरु ? अनिमान लगी कर कलम केम रगो कर मोही ।
केलु जग बरवा सुखेन जग पादुत राग रही बहु मोही ।
मुंदर आ नन ने जग मगुर बाहे । अमानक के पदवानु ।
‘केलु’ आकल आन कभी जग पादुत मो बहि काई मवानु ।

कर्मके अनुसार वश के लया जाता रिता के वश के चिपने ही
सम्बधी करते अपना में रहने के विवेक भगवान और लक्षण २ पर
रहने के वानु की की इन अर्थों में कर्म कथ नहीं है ।

हानि न लय का प्रयत्न करने वाले प्राणुना दे देने के । कर्मके
चिपने ही निर अने का लय की आशा पापन करने के विवेक वर
आश्रय का न नन के कर्मकी आन कदुमन वदतिन कर अपने
, पर ज्ञान विवेक के । कर्मके कलम वल लक्षण के लक्षणों में
में न के अन्तर्गत है कि, कर्मका विवेक की आका कथना केन वने

है कारण कि वे ही मेरे जन्मदाता और पालन करने हैं । पिता की मर्द मे रमा हूं, माता के दूध से पला हूं उनके डरारे से बिरह का प्याला पी सकता हूं । तनवार की धार पर बल सकता हूं और अग्नि में जल सकता हूं, परन्तु इनका दुरामह मेरे भोग कार्य में बाधक है इसलिये काबार हूं ।

लोकमान्य विजय के तिमि करे हुए राज्य यहां स्मरण हो आते हैं " नर रंक के पुत्र राजा को निराम होना योग्य नहीं स्वतंत्र अर्थमिमान, अचूक साधनता, अचल अद्धा, अद्वय धर्म, अखण्ड शौर्य, और अनन्य भाँडे ही लोबकी सब सज है-----पास लड़े रहने वाले न थे, सहायता करने वाले कम थे ऐसे संयोगों में भी वह भारत विजय निराश नहीं हुआ, अनेक नहीं हुआ, विजय लेने नहीं लड़ा, अनेक संकट लड़े, अनेक सपनारं सड़न की परन्तु अन्त में वह जो लड़ तो प्रारंभ ही रखता कति उनके पाव नर देगा । दुश्मन की रात व्यर्थ हो कर अलक्ष्य भी होगी " ।

उक्त समय (सं० १८४२) में पूरा भी क्षमतातंत्री महापुत्र लोब में विराजते थे । उनके पास भीखी शास्त्राध्ययन करने लगे परन्तु लोका की आज्ञा न मिली और आज्ञा न मिले बहोदक जिसे से कुछ बन लके ऐसा न था ।

मह दिन भीखी हवेरी से जाकर अपनी पूरा न

नीच लगे । मार्ती उस समय मानिकलाज को रमानी हुई स्त्री भी
भीजी ने उस छः माह के बालक (मानिकलाज) को मेघ पूर्वक
माता के पास ले ले लिया और अपनी गोद में बिठाया । थोड़े समय
तक उसे रमाया और फिर मार्ती के हाथ में देकर श्रीभी बोले “ इसको
अच्छी तरह रचना ” मार्ती बोले “ बेटा ! इसकी और हमारी संभाल
लेने का काम तो तुम्हारा है ” भीजी मौन रहे । वैराग्य के विचार
लुप्त होने लगे ।

वियथायत ' हम लोग भी एक नश्यवेत्ता के विचारों का मनन
करें - इच्छुक हृदय नहीं बाल मरने, अंगर बोध मरने हैं तो क्यों कोई
नहीं मृत्यु खचता ? किसी को प्रवाह भी नहीं, शोक पूर्ण जीवन दर्द नहीं
से मरने ? अमर होने हैं तो लोग हमें क्यों मरने दे ... ”

“ आवाज और गति ” की यह दुनिया तथा ‘ शान्ति और महान ’
का यह जगत् मित्र २ जाने पर भी बहुत खर्चा ७ है । गुन निर्माणी
की इहे इच्छा, हृदय के कई समान आत्मा , पुष्टि की चितनी ही
प्रवृत्ति करे इसे निश्चय होती मरुत नदनी है । तिन इच्छाओं के
विरुद्ध होने के लिये अवार में स्थान नहीं , अन्त के प्रवृत्ति को
होने के लिये जगत् की मरुतता की अत्यवस्था नहीं, लोको को मरुति-
मान बनाने के लिये दुनिया अत्यन्त नहीं ।

अध्याय ६ ठा

साधु वेष और सत्याग्रह।

“ सितनी उन्नति करने के लिये हम जन्मे हैं ? किन्नी उन्नति की हमसे आशा की गई है ? और हम प्रायः किन्ने अंश तक अपनी देह के मर्यादी बन जायेंगे ? यह हम नहीं जान सकते। अगर हम चाहें तो अपने स्वतः के भाग्य पर सम्पूर्ण अधिकार अना सकते हैं, जो २ बारें योग्य हो अपनी आत्मा से परा सकते हैं और हम जैसे होना चाहें वैसे ही हो सकते हैं ” ।

ओ. एच. माहोन

भोली के वैराग्य का बेग बढ़ता जाता था और राजाभास में अनुमोदन भी मिलता था। प्रथम तो एक दोर दोरा के ननान कनका बिछार या दि न ' दूयं न पहायन्म् ' परन्तु बद निराशा के प्रकाश में मद प्रकाश छटाव होने लगे तब इन महाभाग में मात्र ही मनेए। एक पटिका के आधार से ही प्रकाश करने तब प्रहस करने का निश्चय लिया। अनेक कष्टात और पाद सहन करते अपने निश्चय को हर पक्षि रहे। हर निश्चय का निश्चयन यह एक लक्ष्मी देव रसायन है। इस रसायन के मन्त्रों ज्ञाने करों ने ही करे

धीर-सबे तायक का नाम पाया है चक्रवर्ती के समान सब देश बसा किये और श्री चतुर्विध-संघ ने प्रीति कलश से प्रक्षालन कर पूज्य राज्य पहिराया ।

अंतिम निश्चय कर अपने मित्र गुजरमलजी पोरवाड़ के साथ भीजी एक दिन टोंक से गुप्त चुप निकल गये और अपनी पूर्व परिचित पिय रसिक पहाड़ी को देख उसके समझाये समूह्य तत्वों को याद कर दीक्षा लिये बिना टोंक में पग देना ही नहीं यह निश्चय किया । यह गुप्त निश्चय वृत्तों को सम्झ यह संदेशा प्राकृतिक आन्दोलनों द्वारा अपने श्रुतिविषयों को पहुँचाने को कह कर वे रानीपुरा (यूंरी स्टेट) की तरफ चले गए । रास्ते मिलते ही तथूलालजी बन्धु बनकी माता गुजरमलजी की मा उया गुजरमलजी की बहू बनके पीछे पीछे रानीपुर गए । बड़ा पुत्र लगनशानजी महाराज विराजते थे । गूढ़ ताज करने पर विदित हुआ कि, वे दोनों यहाँ आय थे परंतु एक रात रहकर चले गए हैं । यह समाचार सुन सब वहाँ से खाना हुए । रात में खबर मिली कि, एक जाले के नीचे दोनों जनों ने स्वयं धातु के घेप पहिने हैं और माधु के भंडोपकरण ले फोटे की सक गए हैं । यह घटना सं० १८४४ में गगसर मद में घटी ।

फिर भीजी की मातु श्री प्रभुति सब कोटे आये वहाँ भी पता न चला । फिर निराशा हो सब टोंक आये जारों और पत्र व्यवहार

सुन किया तब खबर मिली कि, रामपुरा (मानपुरा) में मुनिजी विरानलातजी विसनलातजी और बलदेवजी महाराज विराजते हैं उनके पास वे अभ्यास करते हैं ।

यह खबर पढ़कर नायूलातजी तथा गुजरमलजी के भाई हरदेवजी ये दोनों जने उन्हें लिवा लाने को रामपुरा गए परन्तु वे वहां न ये खबर मिलने से वे मुनहेल (इन्दौर स्टेट) गए वहां एक हुन्दी के मकान में दोनों साधु के बेप में नजर आये । उन समय सीजी सदुपदेश सुना रहे थे सोदाओं की संख्या १०० से १५० भगुप के करीब थी । सदुपदेश पूर्ण होने तक दोनों आगन्तुक चुप बैठे रहे । व्याख्यान समाप्त होने पर उन्होंने कहा ।

“ हमारी बिना आज्ञा के तुमने यह बेप पहिन लिया, सो ठीक नहीं किया, अब हमारे छाप टोक चलो ” वक्तर ने उन्होंने कहा “अब पीछे जो आवेंगे नहीं । हुपाकर आज्ञा दो तो हम संतों की सेवा में रह सकेंगे और हमारे ज्ञानाभ्यास में भी वृद्धि हो सकेगी । उन्हें जितना समय मकखन निकलने को आराम नहीं है, वर्य सोइ के बरा हो अन्तराय कने लपो पोरये हो ।

नायूलातजी ने कहा “ आप एक समय टोक आवें आप कहेंगे बेना करेंगे ” । यहां बहुत कहा सुनी हुई । सीजी तथा गुजरमलजी ने आज्ञा देने के लिये आमइ किया और उनके भाइयों ने इन्कार किया और दोनों की टोक से जाना निश्चित किया ।

रक्त, हृदय का सच्चा तत्व इनकी आत्मत्याग की वेदी पर सोने से ही सार्थकता सिद्ध होती है । महात्मानान्धी इसी अभिप्राय को अनुमोदन देते हैं—फतह जब बिल्कुल समीप आकर खड़ी रहती है तब वही राह से संकट भी सबसे अधिक आते हैं । इस दुनिया में आज तक किसीको महान् फतह प्रारंभिक अनेक प्रयत्नों और संकटों को पीछे हटाने वाली एक अंतिम असाधारण कोशिश किये बिना नहीं मिली । प्राकृतिक परम से परम कसौटी बढ़ी कठिन से कठिन होती है । शैतान का अंतिम से अंतिम शालच सबसे अधिक लुभाने वाला रहता है । जो स्वतंत्रता अपने को प्यारी हो सो इस प्राकृतिक कसौटी में से अपने बिल्कुल शुद्ध पार हटाना चाहिये, शैतान के परम शालच के लोभ से हरतरह अलग रहना चाहिये ।

शादक समुदाय सहित बीजी तथा गुजरमलजी मूदा साहिब के स्थापित के चौक में खड़े रहे । उन्हें देगहर सूरा साहिब ने आला की कि, तुम दोनों इनके साथ टोंक जाओ इनके पास टोंक स्टेड का वारंट है तुम नहीं जाओगे तो कायदेसे गिरफ्तार कर तुम्हें टोंक पहुँचाया जाएगा ।

वर सुन बिरांछे न टरने वाले सत्यामही बीलालजी पग पर पग पड़ा एक पांव से खड़े होकर और सूरा साहिब से बोले दिः—

के नक़्क़ान में चले गए प्रायः एक प्रहर तक भीजी एक पाँव से खड़े रहे, भंते ने नाथूनालजी को ऊपर बुलाकर सूबा साहिब ने कहा, "भाई! इस मनुष्य को हम टोंक नहीं पहुँचा सकते, इन्होंने चोरी या ऐसा कोई गुन्हा किया होगा वो हम चाहे जैसा कर सकते थे, परंतु सज्जु का बेप पक्षिना कुछ गुन्हा नहीं इस लिये तुम्हें योग्य जजे बैठा करके ले जाओ और हमें इस संद से जलग रखो।

नाथूनालजी निराश हो भीजी के पास आये और घर आने के लिये नक़्क़ान से प्रार्थना की तब भीजी ने कहा "आप मोहनीय कर्म को हटाओ कि, जिससे यह सब संताप निवृत्त जाय।

जपने भाई को बहुत समय तक एक पाँव में खड़े देखकर नाथूनालजी मज्जद होगर और कहा कि, आप अपने स्थान पर पबरो और आहार पानी करो फिर हम बार्तालाप करेंगे पश्चात् भीजी दौरेह वहाँ से खाना हो वन कुनरी के घर पर लड़ा पड़ने से ठहरे हुए थे आये। भोवरल सती वना गौबरी लाये आहार पानी मिले पश्चात् नाथूनालजी ने भीजी से कहा कि, कभी टोंक से चिटुं आई है सबसे लिखते हैं कि, पि. कुंबरीलालजी का व्याह रुक गया है इस लिये आप भीजी को लेकर जल्द आओ।

भीजी ने कहा "कभी टोंक आने की इच्छा नहीं, आप आगे बढ़े दो टोंक है नरो को ऐसी ही स्थिति से हम बिचरते रहेंगे, परं

हुं। उनके साथ के ज्ञान संवाद में श्रीजी को अपार आनंद जाता और अधिक ज्ञान सम्पादन होता था ।

रामपुरा का चातुर्मास पूर्ण हुए पश्चात् भालाबाद कोटा प्रभृति की ओर हो पांचों महात्मा पुरुष माधोपुर पधारे। पाठको को विरिच होगा कि, माधोपुर में श्रीजी का मौसाल था। और उनके मौसाल पर का धर्मानुराग अधिक प्रशंसनीय था। श्रीजी को कैसे २ परि-
सद सहन करने पड़े यह सब वे जानते थे। श्रीजी के मामा के पुत्र सरनोचंदजी (देववर्णजी के पौत्र) माधोपुर निवासी नादाचंदजी परबाद प्रभृति श्रीजी तथा गुजरमलजीकी आज्ञा के लिये कोशीरा की टोंक जाकर उनके कुटुम्बियों को नाना विधि से समझा दीक्षा की आज्ञा देने कायत रहा।

प्रथम श्रीजी की मातु की पांडकुंबर बाई को खरज करने पर उन्होंने कहा कि, बटू को (श्रीजी की अर्पणिनी) पूजने दो। उनकी ओर मे क्या खरज मिलता है।

माता ने फिर पुन बटू को बुलाकर पूजा कि, दीक्षा की आज्ञा देने में तुम्हारी क्या राय है ? मातकुंबर बाई ने विनय तथा भयपूर्वक खरज दिया " आपने समझ में रहने के लिये जितने प्रयत्न हो सके थिये परंतु सब निष्फल पर। अब हो आपका और हमें खरजो करवायेंगे दोरी है इसलिये आप को परमात्मे में शिरोधार्य

भीजी को दीर्घित हुए पञ्चान् भी विरानलालजी महाराज से नाट्यलालजी ने विनय की, कि आप भीजी के साथ टोंक पधार कर हमारी मातृभी के दर्शन की अभिलाषा पूर्ण करो । महाराजने कहा जैसा अवसर ।

उत्पञ्चान् महाराज साहित्य टोंक पधारे और वहां एक ही रात्रि रह दर्शन दे हाफेठी भी और विहार किया और वहां से झालरा-पाटन पधारे ।

संवत् १८४६ का पातुर्मास झालरापाटन किया । वहां धर्म का बहुत बपोड हुआ, परन्तु भीजी महाराज के गुरु के भी गुरु श्रीविशालालजी महाराज कि, जो उनके ज्ञानादि गुणों की अभिवृद्धि करने वाले आलंकरण भूत थे उनका इस पातुर्मास में स्वर्गवास हो गया इस कारण भीजी को बहुत दुःख हुआ । परन्तु जिंदगी की अस्थिरता और का संसार अछारपना समझने वाले सुरन्त बसे ध्यान करने के लिये बहिष्कृत होकर और और बाक्यों की नज़रन वही से इस पात्र की भरने लगे ।



शास्त्रान्वयन में अत्यन्त उपयोगी हुआ। श्रीजी अविरत रीति से शास्त्रान्वयन करने लगे। ज्ञानमें अधिक उन्नति की। इनकी व्याख्यान शैली भी उत्तम और आकर्षक होने से श्रावकों में भी ज्ञानरुचि और धर्म भावना बढ़ने लगी।

चातुर्मास पूर्ण हुए बाद रामपुरा से बिहार कर श्रीजानोड़ मुक्तान पर पंडित मुनि श्री चौधमलजी महाराज विराजते थे वहां पधारे और अपना अभिप्राय कहा। टोंक भीयुत नायूचालजी बम्ब को भी यह खबर मिलते ही वेभी जानोड़ आये और श्रीजी महाराज की इच्छानुसार उन्हें अपनी नैश्राय में लेने के लिये श्रीमान् चौधमलजी महाराज को आज्ञात्र लिखा दिया, तब उन्होंने अपने बड़े शिष्य वृद्धिचंदजी महाराज के शिष्य बनाकर श्रीजी महाराज को अपनी सन्प्रदाय में ले लिया। यह घटना हुंगरा (मेवाड़) मुक्तानपर संवत् १६४७ के मगसर शुक्ला १ शनिवार को हुई। तत्पश्चात् वे श्रीमान् चौधमलजी महाराजकी आज्ञामें विचरने लगे। यहां इनकी आत्मिक शक्तिका अधिक विकास हुआ। ज्ञानी गुरुके समागम से सूत्र ज्ञान में आशक्ति उन्नति की, निरविवार चारित्र पातन के ये गुरु के प्रीतिपात्र होकर लोगों में पूजनीय और कीर्ति के केलिप्रद सदाश हो गए। " सत्संगतिः कथं किं न करोति पुंसाम् ? "

सं. १६४६ का चातुर्मास सद्गुरुवर्य श्रीचौधमलजी महाराज के साथ जानोड़ में किया।

कुल उपसर्ग न कर सका और साधुओं के धैर्य तथा निर्भयता की कसौटी का यह समय निर्विघ्न समाप्त हुआ। इस युगमें भी चारित्र्य की अपनी प्रभाव तिर्यचों पर दिखा सकता है, जिसके अनेक वशावरण पूज्य श्री के जीवन में मिलेंगे।

संवत् १६५० का पातुर्मास भीमान् चौधमलजी महाराज के परमहंस के समीप रहकर जादमें किया। श्रीजी के समागम तथा सद्बोध से जैन अजैन इत्यादि लोग हर्षित हुए और ज्ञानशुद्धि कर कर्तव्यपरायण बने।

संवत् १६५१ का पातुर्मास निम्बारेडा (मालवा) संवत् १६५२ का छोटी सादही (मेवाड़) और सं० १६५३ का पातुर्मास जावद में किया। श्रीजी महाराज पातुर्मास या शेषकाल जहां २ विराजते थे वहां वहां के लोग उनके अपरिमित ज्ञान निर्मल चारित्र्य वाक्पुण्या इत्यादि असाधारण गुणों से सुग्ध बनकर श्रीजी की मुक्त बंठ से प्रशंसा करते थे। दिन पर दिन उनका दिगमल बरा देरा देशान्तरों में बिस्तारित होने लगा।

‘सागर बर गंभीर।’

संवत् १६५३ में वसुधायी श्री राजारामजी महाराज के साथ श्रीजी महाराज श्रद्धा ३ धनपुत्र बचारे। यहां ऐसे वसुधायी

इन्हीं महापुरुष की सेवा में उपस्थित हुए तो उन्हें 'सागर समान गेभीर होझोगे' ऐसी नुभाशिश दी और वह थोड़े बहुत समय में सफल भी हुई । सतन सत का भेदन करने वाले महापुरुषों के वचन कदापि निष्फल नहीं जाते । योग दर्शन के प्रणेता पतञ्जलि मुनि (जिन्होंने हरिभद्र सूरि को मार्गानुगारी कहा है) कहते हैं कि—

“ सत्यप्रतिष्ठायां क्रियाफलाश्रयत्वम् ”

सूत्रार्थः— (साधक योगी के चित्त में) सत्य की स्थिरता होने पर क्रिया तथा फल की स्वाधीनता (होती है)

अर्थात् अपनी इच्छानुसार अन्य को धर्मोपदेश तथा स्वर्ग नरकादि प्राप्त करा देने का उस योगी की वाणी में सामर्थ्य है । सत्य जिसे सिद्ध हो गया है ऐसे योगी की वाणी अनोष, अप्रतिहत होती है । इसलिये ऐसा योगी किसी को कहे कि, तू धार्मिक होजा तो उनके वचनमात्र से ही वह पापी हो तो भी धार्मिक हो जाता है, किसीको कहें कि तू स्वर्ग प्राप्त कर, तो उनके कथनमात्र से ही वह अधार्मिक हो तो भी स्वर्ग नहीं देने वाले संस्कारोंको दूर कर स्वर्ग प्राप्त कर लेता है (पातञ्जल योगदर्शन)

[illegible]

अध्याय १० वाँ

आचार्यपदारोहण ।



श्रीमान् आचार्य महोदय श्री चौधमलजी महाराज की सेवा में भक्ति विराजते और अपने अमूल्य वचनामूर्तों द्वारा जनसमूह पर अपार उपकार कर रहे थे इतने ही में सं० १९५७ के कार्तिक मास में आचार्य श्री चौधमलजी महाराज के शरीर में व्याधि उत्पन्न हुई । समासागर से समुद्र से सहन करने थे । कार्तिक शुक्ल १ के रात को १०-११ बजे व्याधि बढ़ने लगी । भोजी महाराज ने पूरे श्रीकी सेवामें तन मन, अर्पण किया था । उनके हाथ में नाड़ी न आने से वे काहर आये । और भी कृपमदानजी श्रीमान् जो सवर कर वही पर सोए थे उन्हें बह दृष्टि न कही तुल्य थे भक्ति के अमरगण सेठ अमरचन्द्रजी साहिब वांछते थे तथा अंगुल सेजपालजी मन्थरी इत्यादि को यह खबर दे आये । इसपरसे वे दोनों तथा और दितने ही आदर पूज श्रीकी सेवामें आये । सेठ अमरचन्द्रजी साहिब ने नाकी देखी और पूजार्थी को आवाज दे सोचन किया तुरन्त सचेतन हो उन्होंने अवस्थित साधु भावकों के समस्त प्रकट आलोचना निंदना की पुनः महाराज आरोग्य

दूर शुद्ध हुए । उस समय सेठजी श्री अमरचंदजी पीतलिया भ्रात्रुत तेजपालजी इत्यादि भावकों ने अरज की कि " श्रीमान् ! आपने तो आलोचनादि करके शुद्धि करती है परंतु अब हमें और चतुर्विध संघको किस का आधार है । उत्तर में पूज्य महाराज ने فرमाया कि " मेरे पञ्चान् सम्प्रदाय की सार संभाल श्रीलालजी करें " श्रीजी महाराज के अनुग्रह सुखों से भावक लोग परिचित थे और इसीलिये आचार्यपद को श्रीजी महाराज दिपावें ऐसा वे पहिले से ही चाहते थे सबब सयने पूज्य श्री की उर्युक्त आज्ञाको अत्यनंद पूर्वक शिरोधार्य किया ।

दूसरे दिन कार्तिक शुक्ला २ के रोज दोपहर को चतुर्विध संघ एकत्रित हुआ और श्रीमान् सेठ अमरचंदजी साहिब पीतलिया ने आचार्यश्री की सेवा में पुनः चतुर्विध संघके समस्त अर्ज की कि " जैनशासनरूप आकाश में आप सूर्यवन् प्रकाश कर रहे हैं यह सूर्यचिरकाल तक प्रकाशित रह हमारे हृदय में व्याप्त अज्ञानान्धकार को दूर करता रहे यह हमारी हार्दिक भावना है । परंतु आपका शरीर में व्याधि है इसीलिये सम्प्रदाय में जो मुनिराज आपका योग्य जंचते हैं उन्हें युवाचार्य पद प्रदान करने की कृपा करें ऐसी मैं धर्मसंघ की तरफ से नम्र प्रार्थना करता हूं " इसपर से आचार्य श्री ने पुण्यपुंज सर्वदा सुयोग्य मुनिश्री श्रीलालजी महाराज को युवाचार्यपद प्रदान करने का हुक्म फरमाया तब श्रीलालजी ॥

खोर पैतलगई, नंद्यादल्ल भावक आधिकार्य बाहर मानों से पूज्य भी के दर्शनार्थ जाने लगीं, निरंतर चढ़ते परिहाम से कार्तिक शुक्ला ८ की रात को पूज्य भी चौथमलजी महाराज शान्तिपूर्वक औदायिक देह को त्याग स्वर्ग सिधारे ।

दूसरे दिन अर्थात् सं० १६५७ के कार्तिक शुक्ला ९ के दिन मंदरे रत्नलाल संप आचार्यजी का निर्वाण महोत्सव करने को एक दिन हुआ । दर्शनार्थ आये हुए अन्य भागों के भावक बड़ी संख्या में वहां उपस्थित थे । उस समय चतुर्विध संप में श्रीमान् पुनाचार्यजी महाराज को आचार्यपदाग्रह करने के लिये उनके गुरु भी वृद्धि पदवी महाराज में विशिष्ट की ।

आचार्य जी के मृतदेह को बिनान में पधराया, पश्चात् चतुर्विध संप की विनय परमे उनके पाट पर श्रीमान् श्रीलालजी महाराज को बिछाये और उनके गुरु श्रीवृद्धिचंदजी महाराज ने आचार्य जी की पंखड़ी धारण कराई और चतुर्विध संप सनम सनम और भक्तिभाव सहित आचार्य जी को बदना कर जग विजय मण्डो से पधाने लला शाल और सनमधाय की रीति से लला भिमान में सनमधायजी सहित ने लड़े होकर दुर्गद आवाज थे बला दि ११ को श्रीमान् श्रीलालजी महाराज आचार्यपदग्रह हुए हैं इस लिये सब मर लोटे बड़े मने हो, आचार्य जी को लला ११६ सनम सनम आदिकारी हो लड़े लला द आचार्य

भीलकाहे से क्रमशः विहार करते २ नागौर से पूज्य श्री देह पधारे वहां के ठाकुर साहिब का ज़िम्मेदारी राठोड़ पूज्य श्री के व्याख्यान में आते पूज्य श्री की प्रभावशाली वाणी सुन उन्हें अवरिनिग आनंद होता था । उन्होंने दारु, मांस हमेशा के लिये त्याग दिया था, रात्रिभोजन का त्याग किया, उनका जैनधर्म पर बहुत प्रेम होगया था । उनकी नवझार महामंत्र पर बहुत श्रद्धा जन गई थी ये ठाकुर साहिब प्रति दिन हः सामायिष्ठ करते और महामंत्र के हः पौषध करते थे यह सब प्रमाण पाठ्येन्द्रि—उत्तम प्रतापी, पूज्य श्री के सत्संग और सद्बोध का था ।

जोधपुर (पातुर्नाम) सं० १६५७ का अतुर्नाम जोधपुर में किया इस पातुर्नाम में पूज्य श्री की अनुवर्णन करने के अन्तर्गत बरदार हुआ । वैष्णव धर्माभ्यासी प्रायः ५०-६० जन हुआ श्री के अतुर्नाम बरदेस्तानुत का मान कर जैनधर्म—तुर्नाम को किन्तु राम कर श्रीपुत्र गुलाबदासजी सम्मान के इच्छासे श्रद्धा के बने ।

जावरः—जोधपुर में विश्व का श्री १६५७ के अतुर्नाम महीने में भीमान सुद्धिबंदी महामंत्र के अन्तर्गत पूज्य श्री के पधारे । परंतु पूज्य श्री के अतुर्नाम का मान करने के लिये राम को मान हुए भाई श्री—तुर्नाम के अन्तर्गत महामंत्र महामंत्र कर १० के मान हुआ

दत्तक पुत्र को भी द्रव्य के एक के साथ २, इस सद्गुरु का भी हस्त प्राप्त हुआ है ।

इस चातुर्मास के दान्यान एक बस्तावर नाग की वेश्या ने पूज्य श्री के सदुपदेश से वेश्याशुक्ति का बिल्कुल त्याग किया था तथा वह भाविकाशुक्ति धारण कर पवित्र और भर्गमय जीवन व्यतीत करने लगी थी कि, जो अभी भी विद्यमान है ।

यकानेर के चातुर्मास के पश्चात् पूज्य श्री ने जोधपुर की तरफ विहार किया । वहां श्री मुन्नालालजी महाराज का समागम हुआ परंतु किसी आचार्य श्री की इच्छा के विरुद्ध वे पृथक् विचरने लगे । इस कारण से भीमान् के हृदय में जावरे वाले संतो को अपने साथ शामिल करने की प्रेरणा हुई । फिर वहां से वे क्रमशः विहार कर मेवाड़ में पधारे उदयपुर संघ की कई वर्षों से चातुर्मास के लिये विनन्ती थी इसलिये सं० १६५६ का चातुर्मास उदयपुर में किया ।



अध्यय १२ वॉ

अपूर्व—उद्योत ।



पूज्य भी का यातुमोक्ष होने के कारण उदयपुर संघ में आनन्दोत्सव छा गया पहिले कभी किसी स्थान पर पञ्चोत्तरंगी सामाजिक होने का वृत्तान्त नहीं सुना था । वइ पञ्चोत्तरंगी यहाँ पर हुई इस संवर-करणी में ६२५ पुरुषों की उपस्थिति की आवश्यकता होती है । लोगों का बरसाद इतना अधिक बढ़ा था कि, बिनौद निवासी मोक्षसिद्धजी मुराना ने एक ही आसन पर एक साथ १५१ सामाजिक किये । एवं दिन रात खड़े रहकर सामाजिक का समय व्यतीत किया । इसी भाँति पेरीजालजी महता ने १३१, तथा कन्दे-वाजालजी भंजारी ने १३१ सामाजिक खड़े रहकर किये और अति बरसाद-पूर्वक पञ्चोत्तरंगी के ऊपर सामाजिक की पचरंगी तथा नवरंगी की । इस चौथाने में १०८ अठारहों हुई थीं । इसके शिवाय खेकड़ों सहंभ तथा अन्य प्रकार की भी बहुतसी उपश्रयाँ हुई थी ।

कई खटीकों (कछार्यों) ने हमेशा के लिये जीवहिंसा करने का त्याग किया । इस प्रकार त्याग करने वाले खटीकों में से

किशोर, गोकल वरधा, और नन्दा ये चारों भाई तथा दूसरे भी कई स्वटीक और उनकी स्त्रियाँ, साधु मुनिराजों के पास उनके व्याख्यान (उपदेश) सुनने आती थीं। पूज्य श्री के उपदेश से कसाई पने का धन्दा छोड़ने के पश्चात् किशोर आदि की आर्थिक-स्थिति अच्छी होने से बहुत सुखी हो गये थे। वर्तमान समय में भी व्याज पट्टा तथा हुंड़ी पत्री का धन्दा करते हैं, और बाजार में उनकी साख (पेठ) इतनी बढ़ गई है कि, उनकी हजारों रुपयों की हुंड़ियाँ बिक जाती हैं। इनके सिवाय दूसरे भी कई नीच (शूद्र) लोगों ने आजीवन मांस, मदिरा का उपयोग करना छोड़ दिया और कठिन ही धन्यमत्तावलम्बी जैन-धर्मावलम्बी हो गये।

गोचरी करने के हेतु पूज्य श्री स्वयं जाते और सामुदायी गोचरी करते थे। अन्य धर्म (जैनेतर) तथा दीनावस्था वाले मनुष्यों के यहाँ जाकर मक्की तथा जौकी रोटी ' बेहर , खाते थे। शास्त्रों में जिन जिन जातियों के यहाँ का आहार ग्रहण करने की आज्ञा है उन उन के यहाँ से आहार ले आने में पूज्य श्री अपने मन में जरा भी संकोच नहीं करते थे।

इस वर्ष भी बाहर से सैकड़ों लोग पूज्य श्री के दर्शनार्थ जाते थे। उन सबों के भोजन आदि का प्रबन्ध संघ की ओर से भली भाँति होता था।

शियल सेक्रेटरी के पदपर रहकर स्वयं महाराणा साहिब भी फते-
सिंहजी महारुंर के समस्त मुकदमों की पेशी की है, और अब ३
वर्ष से ही पूज्य १००८ पूज्य भी भीलालजी महाराज के १६
वर्ष के सत्संग और सदुपदेश से निष्ठातिपरायण-जीवन व्यतीत
करता हूँ ।

किशनगढ़ महाराज के सम्बन्धी (कुटुम्बी) सरदारसिंहजी
नामक एक राठोड़ राजपूत जो कि, वैष्णवधर्मावलम्बी थे और
विरक्त दशा में रहते थे । वे योग विद्या के पूर्ण अभ्यासी थे ।
मैं उनके पास सद्यपुर मुकाम पर, योगाभ्यास करने के हेतु
संवत् १९५३ में जाता था एक दिन उनसे मुझे सामने के बगीचे
में से मेंहड़ी के भाड़ का फूल तोड़कर ले जाते देखा । उसी
समय तुरंत ही आवाज देकर मुझे बुलाया और कहा कि
“तुमने हाली के ऊपर से यह फूल किस लिये तोड़ा ? यदि कोई
तुम्हारी अंगुली काटकर लेजाय तो तुम्हें कितना दर्द हो ? क्या
तुम नहीं जानते कि, जिस प्रकार तुम्हारे शरीर में दर्द होता है,
वसी प्रकार वृक्ष में भी जीव होने से उसको दर्द होता है ?” इसके
सिवाय उन्होंने फूल में के वसजीव (चलते फिरते) भी प्रत्यक्ष
रूप से मुझे बतलाये और कहा कि “मुझे मालूम होता है कि, तुमने
किसी जैन साधु महात्मा की संगति नहीं की होगी इसी कारण से
ही मूल के समान इन जीवों को कष्ट पहुंचाते हो” । मैंने यह सुन



थी वनको पूज्य श्री के उपदेश से वैराग्य उत्पन्न हो गया; इस कारण वनमें तथा जावरे वाले एक गृहस्थ श्रीयुव हीराचन्दजी ने पूज्य श्री के पास ' दीक्षा ' लेने का निश्चय किया ।

चातुर्मास पूर्ण होने ही संवत् १८६० की मंगलर वदि ३ के दिन वन दोनों को परिराज श्री शान्तदासजी की बाड़ी में यही धूम धान के साथ दीक्षा देने में लगे । इस प्रकार का दीक्षान्तोत्सव शोधे प्रधान उदयपुर में कभी नहीं हुआ था ।

शिवजील हीराचन्दजी पूज्य श्री के पास दीक्षा लेते हैं, ऐसी खबर मिलते ही श्रीमान गिन्दवां मूर्ते महाराणा साहिब ने कुछ पूर्वक एक हाथी दीक्षा लेने वाले को बैठने के लिये, तथा एक हाथी आंगरेजों के लिये, तथा सरकारी बाजे इत्यादि सरदार में से भेज दिने तथा सर्वशक्ति हो पगेटी लोड़ाने के लिये उत्तम दो धान मल भज के भेज दिने ।

श्रीयुव हीराचन्दजी वासुदेवा हाथी पर बैठे और दूसरे हीराचन्दजी जावरे वाले वाहनों में बैठे । एक हाथी गिराना नमन धाने खला था । हाथी मनुष्यों की भीड़ लगी हुई थी । श्रीयुव हीराचन्दजी वासुदेवा ने हाथी की एक पैड़ी अपने पास रख ली थी । वे इतने में हाथी भयभर कर भीड़ में बिखर जाते थे । अन्ततः मनुष्य इस प्रकार के पैड़ी को बलित न न कर रहता कर गये हैं ।

“ महाराज ! मैं आसपास के गामों में से धकरे खरीद करके, उदयपुर के खटीकों के हाथ बेचता हूँ, मेरा यही धन्दा है; किन्तु आज से मैं जीऊंगा वहाँ तक यह धन्दा नहीं करूँगा ” । ॐ

वहाँ से पूज्य श्री कानोड़ पधोर । कानोड़ के रावजी साहिब ने कानोड़ पट्टे के गामों में जहाँ जहाँ नदी, नाले और तालाब हो वहाँ शीर चसी प्रकार उनका खालसा गाम ‘ कुणनी ’ के पास जो नदी है वहाँ मज्झी नारने की हमेशा के लिये मनाही कर दी उस आशा की आज तक पालना होती है । इसके सिवाय पूज्य श्री के उपदेश से कानोड़ में ५० के लगभग ‘ रंघ ’ हुए ।



कुछ मास पहिले उदयपुर वाले जीतमराजी भटा भी हमको कहते थे कि, उपरोक्त खटीक ने यह धन्दा बिल्कुल छोड़ दिया है ।

मार्गना पर ध्यान नहीं दिया और सीधा मार्ग पकड़ा । यह दुरामद
 नहीं किन्तु शास्त्र धर्म का छान्द है पूज्य भी के साथ भाठ साधु
 थे । उनमें से अधिकांश साधुओं को उस दिन बपवान था ।
 किसी किसी ने केवल छात्र (मही) पीने का आगार (छूट)
 रखा था । सदा मार्ग व्यवहार करते ही पहाड़ों में रहता भूल गये
 और दूसरी पगहंटी से पड़ गये । ज्यों ज्यों आगे बढ़ते गये त्यों त्यों
 बहुत ही भयापना और घना जङ्गल आने लगा । जिसके पशुओं
 की पादपंक्तियों (पैरों के निन्द) दृष्टिगोचर होने लगीं,
 सिंह बाघ इत्यादि के गान भेदी शब्द ध्रुवगोचर (सुनाई देना)
 होने लगे, इस कारण एक साधुने पूज्य भी से कर्ज की कि “महा-
 राज यह जङ्गल सबभुच ही महाभयङ्कर है । ” महाराज ने कहा
 “ भाई अपने साधुओं को किस बात का डर है ? भय तो उसे
 होना चाहिये जो मृत्यु को अपने जीवन का अन्त समझता हो,
 शरीर के विनाश के साथ न अपना नाश मानता हो अथवा मृत्यु
 के पश्चात् के जीवन को भय और आपदा का स्थान मानता हो ।
 जो सद्गुरु के आदेश से दिनराती का ठोक ठोक रहस्य समझता
 हो उसको जीवन और मरण न कुछ भी न्यूनताधिकता नहीं समझना
 चाहिये । जीने की आशा और मरने का भय इन दोनों को जला
 भस्म करके विचारने में ही अपने संयम-जीवन की सच्ची कसौटी
 है । माया मयता को हवा में फेंक दो और दृढ़ता धारण करो ” ।

(शक्ति) होना चाहिये । अपने कार्य को सिद्ध करने वाली शक्ति के साक्ष्य निश्चय करना चाहिये ।

मृत् के घटनों को पक्के करने के लिये सुवर्ण को हल कुन्वन होने के लिये, और धातुओं को आकृति के रूप में आने के लिये अग्नि की आँच सहकर उसमें से निकालना पड़ता है । इस दृष्टान्त से अनेकों विषय की बातें विचार सकते हैं । साधुलोग आत्म-ध्यानाज्ञे और मन को दृढ़ रखने वाले हों तो विचारा हुआ कार्य पूर्ण कर सकते हैं । आधि, व्याधि और उपाधि के दास बने हुए धर पोक साधुओं को बिल्कुल समीप दिखाते हुए गांवों के बीच में, अन्धे दिन में विहार करते हुए भी, साथ में मनुष्य रखना पड़ता है यह निर्बलता का नमूना है ।

विशुद्ध संयम के प्रभाव के अदृश्य-आन्दोलनों द्वारा प्रकृति पर भी इतना अधिक असर पड़ता था कि, सूर्य की ऊष्णता से संरक्षण करने के लिये बादलों में भी स्पर्धा (ईर्ष्या) उत्पन्न होगई थी (जाने आसमान में बादलों के आदागमन का क्रम नहीं दृष्टता था और छाया बनी रहती थी) ठीक दुपहरी (मध्याह्न के समय) में शक्तिशाली वायु का अनुभव होता था और जंगली जानवर भी लिप छुप कर महात्मियों के दर्शन से कृतार्थ होते थे । पशुस्तन वसुन्धरा । भी तार्थिकों के समोसरण में बाघ, सिंह, चक्रे, गैंडे-

अध्याय १४ वाँ

जन्मभूमि में धर्म जागृति ।



टोंक (चातुर्मास) मेवाड़ में से क्रमशः विहार करते हुए कोटें छोड़कर टोंक पधारे और संवत् १६६१ विक्रमी का चातुर्मास अपनी जन्मभूमि टोंक में किया। यहां धर्म का अत्यन्त बद्योत हुआ। अजमेर से दीवान बहादुर सेठ उम्मेदमलजी साहिब लोटां आचार्य श्री के दर्शनार्थ टोंक पधारे थे। ये वहां के नवाब साहिब की भेंट करने को गये, उस समय नवाब साहिब के समस्त आचार्य भी की देवी अनुपम बाणी, और उद्यमोत्तम गुणों की मुक्त कंठ से प्रशंसा करते हुए उन्होंने कहा कि “यह रत्न आपकी ही राजधानी में कबल हुए होने से जैन इतिहास में टोंक का नाम भी स्वर्णचरों में अंकित होगा,। यह सुन कर नवाब साहिब अत्यन्त हर्षित हुए और उन्होंने भी पूज्य श्री की प्रशंसा की।

पूज्य श्री की अपूर्व प्रशंसा सुनकर खान साहिब महम्मद इन्सुख खान पूज्य श्री के पास जाने लगे और उनके हृदय पर भर्जी के उपदेश का इतना प्रभावोत्पादक असर पड़ा की, उन्होंने

और राजा परस्पर सहानुभूति रखते हों यह दोनों के कल्याण के लिये आवश्यक है। एक व्यौपारी बनिये का युवा पुत्र, परमार्थ पथ पर कहां तक प्रयास कर सका है यह प्रयत्न अनुभव होने से वृद्ध लोगों की मंजूरी पाते किया करता कि " पुरुषों के प्रारब्ध के आगे पत्ता है, उसका यह प्रत्यक्ष प्रदर्शन श्री पूज्यजी महाराज हैं। रसिया के शिखर पर अकेले फिरते हुए भीलालजी में और इस समय के पूज्य भीलालजी में ' कंडो और कुंजर जैसा अन्दर पड़ गया था, इस समय बड़े २ राजा महाराजा और नवाब रसिया के शिखर के प्यारे लाल के पैरों में मस्तक झुकाते थे।

जिस व्यक्ति को हजारों लाखों मनुष्य मस्तक झुकाते हों, वैसी राजवंशी व्यक्तियों जिस समय एक वाणिज्य युवक के पैरों की रज्ज अपने मस्तक पर चढ़ाने को करना नौगण्य समझें उस समय प्रकृति की मालूम न होने वाली कलावाजी की अपूर्वा सिरु होती थी।

एक अनुभवो बल कहता है कि ' भद्रा गिरिशिखरों पर परिभ्रमण करती है, इस कारण उसकी दृष्टि—नर्यादा बहुत बढ़ी होती है। अन्य मनुष्य जिस वस्तु का देखने में असमर्थ होते हैं वही वस्तु भद्रावात् मनुष्य की गेगोचर होती है। इससे जिस कार्य का प्रयत्न करना दूसरों के अनुभव प्रतीत होता है उस

मे-वाले साधुओं को ही मैं मेरे साधु मान सकता हूँ। यदि इस
 नर्मादा को कोई अलंघन करे तो उससे साथ समाचारों के स-
 बन्ध को भङ्ग करने में मैं तनिक भी संकोच न करूँ इसका कारण
 यह है कि, जिस कर्तव्य के लिये कुटुम्बियों और संसारके सम्बन्ध
 को छोड़ा है उस कर्तव्य में अन्वयय करने वाले का साथ और
 सम्बन्ध त्याग्य है। परस्पर प्रेम पूर्वक संयम समाधात हो गया।

वचिव रीति से विचारों से माएन हो कि, सहकार की भी
 सीमा हो सकती है। शास्त्र की प्रतिष्ठा और चारित्र्य के आदर्श
 जब तक सशक्त रहें जब तक ही सहकार सम्भव रह सकता है,
 स्वस्थान् उसकी हर पूरी होते ही असहकार ही आवश्यक है छाती
 पर स्तर बाँधकर अपार समुद्र नहीं धैर सकते। किम हेतु
 म्याय और कौनसो नीति साधने से सहकार या असहकार करना
 पड़ता है इसका गम्भीर विचार किये सिवाय किसी प्रकार भी
 अनुमान नहीं कर सकते। भारी और व्यवस्थित शासन के बिना
 प्रगति असम्भव ही है। किसी भी कार्य में अव्यवस्था जुनी, अंधा
 धुंधी और गहयङ्ग बढ़ती गई। विष प्रचारक बेप रोकने का उत्तम
 रामबाण उपाय असहकार है। समाचारी यह सरकार का माप
 देखते का यर्मानेटर संत्र ही है।

शरीर से साधु होने के साथ ही मन से भी साधु हो। मस्तक
 झुंडाने के साथ ही मन को भी मूँड़ा हुआ समझे सभी त्याग का शुद्ध

मुनि देता सकते हैं। उनके क्लृप्त रहने से वे सामान्य मनुष्य को जगोपर हो देने भी कुछ दे पार्यों या अनुभव कर सकते हैं। प्राकृतिक नियमों को स्वयं समझने एवं समझाने का उन्हें पूरा अवकाश मिलता है इनको अपने स्वयं ही आत्मा का विचार नहीं करने का है किन्तु जो सम्प्रदाय के सिंहासन पर विराजता है इनके भेद के लिये भी प्राकृतिक से (जीवोद्, बहुत ही) प्रयत्न करना पड़ता है। मुनियों की जवाबदारी दूसरे लोगों की परेशा नहीं करने रखी है।

लोधुग—एतुर्गम) संवत् १८६२ का एतुर्गम पूज्य होने से लोधुग में विद्यालय, पन्नापानी, विन्डू, मुनभानान हमारो मनुष्य होने से लोदी महाशय के वपनानुन का पान कर (पदरु कर) एतुर्गम हो न थे। और एतुर्गम, एतुर्गम, एतुर्गम तथा संवत्-कारो द्वारा एतुर्गम एतुर्गम करते थे। कई गोलाशरी लोदी ने माल महाशय के मालिशपान का काम कर दिया और हमारे लोधुगो का एतुर्गमन दिया गया।

लोभपुत्र का लोभ ही दुर्लभ वस्तु है। जिसके लोभ ही में लोभपुत्र ने
 अपना भविष्य भूमि खसिवा दिया। यही है लोभपुत्र के लोभ में लोभपुत्र का
 लोभ ही, लोभपुत्र ही लोभपुत्र का लोभ ही लोभपुत्र का लोभ ही
 लोभ ही लोभ ही लोभ ही लोभ ही लोभ ही लोभ ही लोभ ही लोभ ही

अध्याय १६ वाँ

रत्नपुरी में रत्नत्रयी की आराधना ।



कनरा: वहां से (कोठारीया नाथद्वारा से) बिहार करते हुए पूज्य श्री रत्नलाम कुङ्ग समय के लिये पधारे । तब उनको श्री संपने चातुर्मास करने के लिये अति आग्रहपूर्वक प्रार्थना की, किन्तु वह अस्वीकृत हुई । और रत्नलाम से बिहार करके भोजी पंचेड़ पधारे । रत्नलाम संप के कई अमंगल्य भावक भी दर्शनार्थ पंचेड़ गये और वहां के स्वर्गीय कैप्टन ठाकुर साहिब * रघुनाथसिंहजी ने

ॐ ये स्वर्गीय ठाकुरसाहिब तथा उनके भाई साहिब वर्तमान ठाकुरसाहिब भी चेतसिंहजी साहिब दोनों पूज्य भी पर इतना अधिक (सदा एव मेन) भाव रखते थे कि, उन भीमानों के फोटो इत प्रत्यक्ष में यहां पर देना उचित होगा । 'पंचेड़' यह ग्राम मार्ग में ही होने के कारण पूज्य भी का वहां पर समय समय पर पधारना होता और भीमान् ठाकुर साहिब पूज्य श्री के उपदेश का लाभ बठाकर शान्त स्वभाव के होगये थे । पूज्य भी के दर्शनो का लाभ जिस समय आप रत्नलाम में आते उस समय भी लिया करते थे ।

कि, रत्नलान के घड़े २ वयोवृद्ध भाषकों के मुख में से पुनः २ इस प्रकार के वाक्य निकलते थे कि, " श्रीमान् उदयसागरजी महाराज आदि महापुरुषों के आगमन और उपस्थिति के समान ही लोगों के हृदय पर वम प्रभाव तथा उत्कृष्ट उत्साह दृष्टिगोचर होता है" । धर्म, ध्यान, त्याग-प्रत्याख्यान करने के लिए श्रीमान् कदापि किसीको भी आप्रहपूर्वक नहीं कहते थे, वसी प्रकार न किसीको मञ्जूर करते थे, ऐसी स्थिति में भी उनका उत्कृष्ट पारित्र और आत्म शक्तिओं का आकर्षण इतना अधिक बढ़ गया था कि लोगों स्वयं ही त्याग-पञ्चक्याण, धर्मध्यान, जप, तप, स्कंधादि विशेष-उत्साह के साथ हार्दिक-समर्पणों के साथ करने लगे । इस समय संवर करणी, धर्मजागृति और शान्त्युद्धि इतनी अधिक हुई थी कि, पिछले वर्षों से उसको चौगुनी कहने में तनिक भी अतिशयोक्ति न होगी ।

इसके सिवाय विशेष चित्ताकर्षक बात यह है कि, राज्य कर्म-चारी गण साधु महात्माओं के सत्संग का लाभ बहुत कम उठाते थे, किन्तु श्रीमान् के विराजने से उनकी अनुमत्त प्रशंसा सुनकर राज्य के बड़े २ कोहदेदार, अमीर, नमस्त्र, बलील इत्यादि पूज्य श्रीकी सेवा में आने लगे और उनके ऊपर पूज्य श्री का इतना अधिक प्रभाव पड़ने लगा कि, वे पूज्य श्री के पूर्ण गुणानुरागों और प्रशंसक बन गये थे ।

- दो माह तक दो दो दिन के अन्तर से (तेल तेल पारना)

२१

तीन तीन दिन के अन्तर से दो माह तक (तेल तेल पारना)

११

धर्म चक्र की तपश्चर्या,

२१

संध (चार पंकी)

७४

पोषा कुल

१०६८६

तपस्या की पचरंगी

२७

संध जमीन के

४१

संवत्सरी के पोषा

१६०१

दया की पचरंगी

४

पूज्य श्री ने १ आठई, २ तेल, तथा १॥ बैठ नहाने तक एकान्तर उपवास, तथा इसके सिवाय फुटकल उपवास किये थे । भूलचन्दजी महाराजने ३४ उपवास का थोक किया था । ३४ के पूर के दिन स्वधर्मी अन्यधर्मी, लोगों ने ब्यापार धन्धा बन्द करके यथाशक्ति प्रव्रत, नियमादि किये । कसारखाने की ४४ दुकानें बन्द रही तथा कछेरा, तेली, कंदोई, घोड़ी, रंगरेज इत्यादिकों का व्यापार

अध्याय १७ वाँ

मेवाड़ और मालवे की सफलता पूर्वक यात्रा



रतलाम से बिहार करके भीमान आचार्यजी भी बड़ी सादर (मेवाड़) पधारे वहाँ संवत् १९६३ पौष वद्य ३ के दिन श्री लक्ष्मीनन्दजी महाराज जो कि, इस समय विद्यमान हैं, उनके सांसारिक अवस्था के पुत्र पन्नालालजी तथा रतनलालजी * ये दोनों भाई तथा पन्नालालजी की स्त्री हुतास्याजी ऐसे एक ही कुटुम्ब के तीन जनों में धन, माल, ज़मीन इत्यादि का दान करके प्रथम वैराग्यपूर्वक दीक्षा स्वीकार की।

* भाई रतनलालजी का (सम्बन्ध (सगाई) हो चुका था और विवाह होने की तैयारी थी, ऐसी दशा में भी उन्होंने दीक्षा ले ली। रतनलालजी की उमर थोड़ी होठे हुए भी वे अत्यन्त प्रतिभाशाली, धीर वीर, गम्भीर और संरक्षारी पुरुष थे, और उनकी ज्ञानशक्ति भी अत्यन्त बढ़ी हुई थी। उनकी व्याख्यान शैली भी अधिक प्रशंसनीय थी। कई भाइयों का ऐसा अनुमान था कि, श्री लक्ष्मीनन्दजी महाराज की सम्प्रदाय को यह महानुभाव प्रकाशमान

वाल भीमव शोभालालजी दोशी ने पूज्य भी के पास दीक्षा ली, उस समय कान्फरन्स में आये हुए हजारों मनुष्य वत्सव में शामिल हुए थे । भीमान् मोरवी और लीबड़ी नरेश भी विराजमान थे, दीक्षा देने के प्रथम पूज्य महाराज ने कहा कि, भाई तुम घर बुद्धि इत्यादि त्याग कर मेरे पास दीक्षित होने आये हो परन्तु समय का कार्य महान् दुष्कर है । अनुभव हुए बिना कितनी ही बातें ध्यान में भी नहीं आती, इसलिए पूर्ण विचारकर यह साहस करो, फिर दूसरी यह बात भी याद रखना कि, जबतक तुम पंच महामत शुद्धतापूर्वक पालन करोगे वहांतक मैं तुम्हारा साथी हूँ, अगर इसमें जरा भी दोष लगाया कि, मैं तुम्हारा साथ छोड़ दूंगा, तुम्हारे और मेरे धर्म की ही सगाई है । यों पूज्य भी ने सब सं- यम की दुष्करता दिखाई, उसके उत्तर में भीमव शोभालालजी ने अर्ज की कि, महाराज भी जबतक मेरी देह में प्राण है तबतक मैं बराबर स्थायी और स्थाय तुम्हें जिसकी नेत्राय में सौंपोंगे वन मेरे गुरुदेव की आज्ञा का पालन सच्चे दिल से करता रहूंगा, फिर पूज्य भी ने विधिपूर्वक दीक्षा दी ।

शिष्यों की संख्या बढ़ाने का पूज्य भी को विन्मूल लोभ न था उन्होंने अपनी नेत्रायका एक भी शिष्य नहीं दिया । एकदम मुहक कर देने की पद्धति से वे विन्मूल विद्वत् थे । वे दीक्षा के उद्देश्य का भी अपने पास रखकर स्थायीभाव का उद्देश्य थे । वे अपनी

,

,

जाता है । जयपुर में ऐसे दृष्टान्त प्रत्यक्ष देखकर लेखक पबड़ा जाते हैं ।

हिन्दू अत्यन्त श्रद्धालु, धर्म प्रेमी-और आस्तिक देश है जसमें भी सब कौमों की अर्पणा पोचीसे पोची वनिक बंधुओं की हारपोक आस्तिकता तो अमरव गजब में काज देती है । प्राचीन समय के साधुओं के शुभ संस्कार जो बंरा परम्परा से गर्भित होते आये हैं वन्हींका यह परिणाम है । ये पवित्र संस्कार जाग्रदव्यमान बने रहें ऐसा अवन अंतःकारण पूर्वक चाहते हैं परन्तु अपनी इस भावना को भोक्षेपन या संदेह के बेगमें बहाने से 'देवांशी दक' का दावा करने वालों एक तरह से समाज को नीचा दिवाने जैसा काम कर बैठते हैं ।

बहुत समय से स्थित रहे ये संस्कार वर्तमान समय में आवश्यक हैं ऐसे गहन विश्वास में बैठनेसे दिल् पबड़ा जाता है परन्तु यह बात तो सत्य है कि, यह मान्यता जब प्रारंभ हुई होगी तब तो मक्के खारित्र अत्यन्त ही पवित्र और इस 'देवांशी दक' को पूर्ण योग्यता सिद्ध करने वाले लोगों ऐसा प्राचीन आदित्य विश्वास देता है परन्तु माचही साथ जमी सतिदित्य में यह बात भी मिलती है कि, इन दको का दुदरयोग करने वालों का अमाधारण असराधी से विशेष मत्रा मिलती थी । एक अछान गनुय और एक सब कानून का माता बही गुन्हा करता है तो

अज्ञान मनुष्य की अपेक्षा कानून जानने वाले को विशेष सजा मिलती है और वही अधिक विरक्त होता है ।

अपने समाजिक नियमों (Social Contract) के अनुसार नहीं चलने वालों के सामने सख्त कदम भरने की परधानगी है कारण इस दृष्टान्त से दूसरों को सख्त सुनट चाल चलने की जगह मिलती है एक दो को माफी दे देने से दूसरे चाईम जनोंको इस दफ की सुमारी में समाज में विपैता जल फैलाने तक का अधिकार मिलता है । योग्य को योग्य मान देने में अरन अपनी भद्रा की सीमा नहीं बलांघते । संयम और साधु-धर्म की बहुमान्यता निभाने में अपने को विनय-धर्म आदरना चाहिये परन्तु इस विनय से ऐसा अर्थ न निहालना चाहिये कि, इस समुदाय की चाहे जैसी चाल हो निभालेना या प्रसन्नता, बड़ाई, करनी चाहिये अपने दैवी हक - को कुक्षोड़ के सशरे व्यर्थ घूँतते हुए नामधारियों को कर्म के अचल नियमों का अभ्यास करना चाहिये । सत्य सनातन धर्म जिनमें तो देव जैसे उच्च सात्त्विक गुण हों वैसे ही दैवी हक प्रदान करना पसंद करता है । साधु-वर्ग और भावरु-समुदाय अरने २ कर्तव्य में अपनी २ जवाबदारी समस्त समय और भाव को सन्मुख रख जीवन सार्थक करेंगे ऐसी लेखक की हार्दिक भावना है ।

कारण बारी-बारी-बारी से तृण हो अपने राज्य में नीचे लिखे अनुसार जीव दया का प्रबंध किया है ।

(१) नदरात्रि में जो आठ भैंसे तथा १० बकरों का बध होता था वह हमेशा के लिए बंद किया ।

पाड़ा, हिमालय माया को पाड़ा १, पंहेड में पाड़ा १— गाजन देवी पाड़ा १ लक्ष्मीपुर में पाड़ा १, वरदेवरा कुजुं में पाड़ा २, वरगुण काचर में पाड़ा दो यों कुल पाड़े आठ ।

बछरा । पातावेदी में बकरे ४, बागला के खड़े में बकरा १, गुरुवो के खड़े में बकरे ३, भेंतरडी में बकरा १ और मरिया मेरा में १ यों बकरे कुल १० ।

कुल जानवर अठारह का बध प्रतिवर्ष होता था वह बन्द कर दिया गया ।

(२) कनाई खाना बंद, (३) तालाब में मछली मारना बन्द (४) कपड़े में जगने मंजूर.

महाराज महाराजा साहिब की आज्ञा से कम देखाता था कि राज्य में मछली मारने की अनुमति दत्त हुई उनके हुक्म पर राजनिहाली में शिकार करने तथा मांस भक्षण करना हमेशा के लिये मना किया । हुक्म राजनिहाली में अपनी जमीन के पारो के दो बड़े पत्थरों पर जले से बंध कर दिये गए किन्ती

